गुरु नानक देव

[किशोरो के लिये]

लेखक
नरेन्द्र पाठक

सन्मार्ग प्रकाशन
बैंग्लो रोड, दिल्ली।

विषय-सूची

गुरु नानक जी के जन्म से पूर्व का भारतवर्ष

भारतवर्ष के इस महान् सत, कवि-गुरु का जन्म उस समय हुआ जब सारे भारत मे हफडा-तफडी फैली हुई थी। कोई भी शासक शासन नही चलाता था। जहां किसी का दिल आया चढ दौडा। जिस क्षेत्र पर तलवार के जोर से अधिकार कर लिया वही का शासक ही बैठा। जब कोई दूसरा शक्तिशाली शासक आया तो उसने कमजोर शासक को मार कर स्वयं अधिकार जमा लिया।

ऐसी हालत मे जनता की हालत क्या होगी इसे आप स्वय सोच सकते है। बेचारी गरीब जनता हर ओर से अत्याचार का शिकार हो रही थी। जो भी नया शासक आता वह अपनी बात करता अपनी ढंग से जनता को दुख देता।

विदेशी हमले

जब देश मे चारो ओर फूट पडी हो तो विदेशी शासक ऐसे अवसर का लाभ क्यों न उठाते। यह ऋषियों-मुनियों की धरती

जो सदा धर्म का पालन करती रही है, अधर्म की बाते तो सोच भी नही सकती थी। मगर यह धर्म तो भारत का धर्म था। यहा सत्य की पूजा होती थी, राजे-महाराजे आपस में लडते अवश्य थे मगर धर्म का पालन करते थे, धार्मिक स्थानो का पूरा आदर करते थे।

इस्लाम की नींव और भारत पर आक्रमण

भारत की धरती सदा से दया-धर्म की धरती बनी रही है। इसने सदा संसार को धर्म-मार्ग दिखाया है, मगर आज जब अपने पूज्य गुरुजी के जीवन को पढते है तो हमे इस समय के सारे हालात को सामने रखकर इतिहास की खोज करनी होगी। मुख्य रूप से हमे इस्लाम के हमलों को सामने रखना होगा। भारत के हमलो को सामने रखते हुए इस्लाम की नीव को देखना होगा। इस विषय मे हमे सईद मुहम्मद लतीफ की पुस्तक के ये शब्द स्पष्ट मदद करते है :

यह धर्म हज़रत मुहम्मद ने चलाया था, जो अरब के कुरैशी कबीले से सम्बन्ध रखते थे। इन्होने अपने देशवासियो को एक अल्लाही सदेश अथवा आकाशवाणी का अमर सदेश सुनाया। कहा कि इस धर्म को तलवार की शक्ति से फैलाने की आज्ञा हमें अल्लाह के घर से मिली है। उन्होने कहा—

तलवार स्वर्ग और नरक की कुजी है। मुसलमानो के लिये खून की एक बूद धर्म के लिये बहाने और रणक्षेत्र मे एक रात काटनी, महीनो के रोजे (व्रत) और नमाजो से अधिक लाभ-दायक है। जो मुसलमान युद्ध के मैदान मे मरते है वे सीधे स्वर्ग जाते है, स्वर्ग मे उन्हें हूरे (परिया) मिलती है। वहां पर ये बहादुर सदा आनन्द का जीवन व्यतीत करते है, उन्हे वहां जीवन

के सुख की हर चीज मिलेगी।

अरब के मरुस्थल के रहने वाले बेकार और गुलामी का जीवन व्यतीत करने वालों के लिये यह बात आकर्षक और दिल लुभाने वाली थी। उनकी भूख और परेशानी ने उन्हें एक नया मार्ग दिखाया, दूर का मार्ग जिसमें यह बात स्पष्ट थी कि यदि युद्ध में मारे गये तो स्वर्ग में जायेंगे, बच गये तो लूट का माल मिलेगा। यह चीज उनकी सोई राक्षसी भावनाओं को जगाने के लिये काफी थी। वे जोश से उठे और अरब के आस-पास के सारे क्षेत्रो पर हमले करके उन पर अधिकार जमा लिया। छोटे-मोटे युद्धो मे उन्हे सफलता मिली, जिससे उनके हौसले और भी बढ गये और वे दूसरे देशो की ओर देखने लगे। इनमे मुख्य रूप मे भारत ही ऐसा देश था, जो हर प्रकार से एक सुन्दर और सम्पूर्ण वस्तियों से भरा हुआ था।

अरवो ने इस सुन्दर और धर्मी देश पर हमले किये और यहां से धन लूटा। उनके अपने शब्दों मे काफिरो के विरुद्ध इस जहाद मे यहा कत्ले-आम किया और हजारो स्त्रियों को साथ ले गये। लाखो लोगों को दासता के कार्यों के लिये गुलाम बनाकर ले गये। इन हमलो से इस देश के शात वातावरण मे एक हगामा पैदा हो गया। यहां का सारा जन-जीवन उथल-पुथल होकर रह गया। यहा के लोगो की शाति भग हो गई।

अरब लुटेरो की लूट-मार के पश्चात् अफगान सरदारों ने इस देश की ओर देखा। यह शांतप्रिय सतों और मुनियो का देश, जिसके वासी अधिकतर आपसी फूट का शिकार थे, अफगान लुटेरों से कैसे बच पाता। मुहम्मद गजनी शेर की भाति इस देश पर चढ आया और इसकी शाति भग की। यहा तक कि शातिवादी लोगों को बेदर्दी से काटना आरम्भ कर दिया। हजारों बेगुनाहो को मौत के घाट उतारता हुआ यह लुटेरा, जाती बार

हज़ारों स्त्री-बच्चों को साथ ले गया जिन्हे अफगान मडियो मे जाकर सारी उम्र गुलामी करने के लिये बेचा गया। यह जीवन उनके लिये मौत से भी बुरा था। मरना तो एक ही बार था, यहा सारी उम्र सिसक-सिसक कर मरना पडता था।

इन सब हमलो को हम मुस्लिम इतिहासकारों के लेख के प्रकाश मे देखे तो हमे स्पप्ट नज़र आयेगा कि महमूद गज़नवी और कुतुबउद्दीन ऐबक और खिलजी के हमलो मे यहा हजारो नही लाखो मन्दिरो को तोड़कर मस्जिदे बनवा दी गई, ब्राह्मणो को चुन-चुनकर कतल करवाया गया। मिनहाजुल सिराज की रचना तबकती नासिरी मे स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि जब मुहम्मद बख्तियार खिलजी ने बिहार को जीता तो वहा एक लाख ब्राह्मणो को कत्ल किया, और वहा की धार्मिक सस्कृत-पुस्तको को जला डाला। यह इतिहास इतना लम्बा है कि इस छोटी पुस्तक मे पूरा नही हो सकता। इस युग के अत्याचारो को पढ़कर लोगो के हृदय काप उठेगे। भारतवर्ष के लोगों का धर्म नाश करने के लिये क्या कुछ नहीं किया गया? आज वह युग आखो के सामने आता है तो आत्मा काप उठती है। धर्म के नाम पर कुछ लोगो ने यहा के लाखो बेगुनाह लोगो का खून किया है। एक प्रश्न बार बार उठता है—क्या विश्व का कोई भी ऐसा धर्म हमे यह सिखाता है कि हम दूसरे धर्म के लोगो को खुलेआम कत्ल कर दे? उनके धार्मिक स्थानो को तोड कर उनके स्थान पर अपने धार्मिक स्थान बनवा दे?

नही···नही···विशेपकर हिन्दू धर्म का आदि काल से यही मत रहा है कि जीओ और जीने दो। यही एक धर्म है, जो रक्त-वाद का सदा से विरोधी रहा। धर्म जितना भी फैला प्रेम से ही फैला। इस धर्म ने कभी किसी दूसरे धर्म को बुरा नही कहा, दूसरे कसी धर्म को मिटाने का यत्न नही किया और न ही दूसरे

धर्म के धर्म-स्थानो को तोड़कर अपना धर्म-स्थान बनाने के बारे में कभी भी सोचा। हिन्दू इतिहास इस बात का साक्षी है, इस धर्म ने सब धर्मो का आदर-सत्कार किया,मगर इसी धर्म परसबसे अधिक अत्याचार हुये। इन अत्याचारो का उत्तर भी उन्होने प्यार से दिया। मुस्लिम शासकों के इन अत्याचारों को हम धर्म का कर्तव्य कभी नही कह सकते। ऐसे धर्म के लोग कभी किसी धर्म के मानने वाले ही नही कहे जा सकते। वह धर्म जो मानवता का रक्त बहाता है, उस धर्म को हम कभी मानने के लिये तैयार नही। तलवार की शक्ति से फैलाये हुये धर्म कभी धर्म नहीं कहला सकते, हमारे धर्म ने हमे यही सिखाया है।

यह ऋषयां-मुनियो की धरती दया-धर्म का मार्ग दिखाती रही है, यही कारण था कि बाहर से आए लोगों में से बहुत सारे बिल्कुल ही बदल गये। वही लोग जो इन अत्याचारी लोगो के साथ आये थे, वही धर्म-प्रचारक भी बन गये। इनमे हम अमीर खुसरो, भक्त कबीर, बाबा फरीद जैसे लोगों को एक ओर रखते है। महान् अकबर का चित्र भी हमारे सामने आता है, लेकिन हमारा विषय इस समय गुरु नानक देव जी के प्रारंभिक काल से है, इसलिये अभी हम इसमे उलझ नही सकेगे।

इस अत्याचार के विरुद्ध यदि यहां के लोगों ने तलवार नहीं उठाया तो सबसे बड़ी तलवार अधर्म का जवाब धर्म से दिया। इन अत्याचारो के कारण उनके धर्म के साथ श्रद्धा कम नही बल्कि और बढी। जो लोग आपसी लडाइयों में लगे थे वह सब कुछ भूलकर धर्म-रक्षा की ओर जुट गये।

साधू मत का जन्म

अधर्म के विरुद्ध युद्ध मे, जब छोटे-छोटे राजे-महाराजे विदेशी शासकों से हार मान गये, तो अत्याचार का भयंकर चक्र चला

बेगुनाहों के कत्ल तो होते ही थे, मदिरों के अंदर की मूर्तियो को चौराहो पर रखकर तोड़ा गया, इसके साथ ही इतिहास के पृष्ठ वदले। जो काम लोग तलवार से नही कर सकते थे, वह भक्ति की शक्ति से करने लगे। कवियों की लेखनियो ने एक नया मोड़ लिया—भक्ति युग।

इतिहास के यह पृष्ठ हमे सिकन्दर लोगी के पास ले जाते है जिसने अपने दूसरे साथियो की भांति हिन्दू धर्म पर अत्याचार किये, जिसने मन्दिरों को तुडवाने और ब्राह्मणों की कत्ल करवाने में पिछले सारे रिकार्ड मात कर दिये। उसका सवसे वड़ा कार्य यही रहा कि सारे हिन्दुओं को मुसलमान वना दिया जाये। हम यह कभी नहीं कह सकते कि सारे के सारे मुसलमान उसके इस मत से सहमत थे। यदि यह वात न होती तो वह अपने ही एक मुसलमान साथी, जो लखनऊ का सूबेदार था, अहमदखा को केवल इसलिये जेल की सलाखों के पीछे बंद कर दिया कि उसने हिन्दू-धर्म की शक्ति को देखकर उन पर अत्याचार वद कर दिये थे। इससे आप भली भाति अदाज लगा सकते है कि यह अत्याचार जनता की ओर से नही केवल एक वादशाह की आज्ञा से होते थे, जिसे सारी जनता नही पसद करती थी। किसी एक व्यक्ति को हम धर्म नही मान सकते। धर्म और व्यक्ति दोनो अलग-अलग चीजे हैं। वादशाहो का कार्य अत्याचार रहा है। यदि यह वात न होती तो लोधी वग वावर के साथ क्यो लडता और हार मानता ? ये दोनो तो एक ही धर्म को मानने वाले थे। इससे एक वात भली भाति सिद्ध हो जाती है कि ये लोग जालिम थे, अत्याचारी थे।

जव अत्याचार सीमा से वढ जाता है तो उसका अंत होता है। सिकन्दर लोधी ने जो भी अत्यचार ब्राह्मणो पर किये, वे अपनी सीमा से वाहर हो चुके थे। उसने किसी भी धर्म-प्रचारक के साथ दया का व्यवहार नही किया। उसके जुल्मो ने ही हमारे

धर्म की महानता को और बढावा दिया। लोग सब काम छोड़कर धर्म प्रचार के लिये निकल पडे। इसमें सब से आगे साधु, संत, कवि थे, जो मन्दिरो से बाहर निकल कर गाव-गांव में जाकर धर्म का प्रचार करने लगे, क्योंकि मन्दिरों पर उस समय पूर्ण रूप से ब्राह्मणों का अधिकार था। वे लोग अपने आपको ईश्वर मानने लग गये थे, इसलिये इनकी यह धृष्टता भी साधुओ-सतो के कार्य को आगे बढाने का कारण बनी। वे लोग हर प्रकार से त्यागी थे। उन्होंने धर्म-प्रचार के लिये मन्दिरों का सहारा न लेते हुये अपना एक अलग मार्ग चुन लिया।

इन्ही महान सतो की श्रेणी मे गुरु नानक देव जी आते हैं।

गुरु नानक जी का जन्म

गुरु नानक देव जी का जन्म १५ अप्रैल, १४६९ ई०, स० १५२६, वैशाख शुदी तीन को तलवडी गाव मे हुआ।

स्मरण रहे कि उनका जन्म-उत्सव किसी अज्ञात कारणवश कार्तिक की पूर्णिमा को मनाया जाता है।

तलवडी इस समय दुर्भाग्य से देश के बटवारे के कारण पाकिस्तान में चला गया है। इसे अब ननकाना साहिब कहा जाने लगा है। यह नगर उस समय चारों ओर से घनो जगलो से घिरा हुआ और आबाद क्षेत्र था। इसे रायमोये नामी एक भट्टी राजपूत ने बसाया था जो कि तलवण्डी के आस-पास के बीस गाव के मालिक थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र रायबुलार इस क्षेत्र के मालिक बन गये। रायबुलार और उनके पिता जी नये मुसलमान बने थे, अथवा जबर्दस्ती बनाये गये थे। मगर दोनो पिता-पुत्र बड़े धार्मिक स्वभाव के थे। योद्धा होने के नाते उन्होने शक्ति से इस इलाके पर अधिकार कर लिया। इनमे यह

विशेष गुण था कि यह अपनी प्रजा पर जुल्म नही करते थे, चाहे कोई हिन्दू हो या मुसलमान. वह सबको एक ही दृष्टि से देखते यही कारण था कि सब लोग उन्हे इज्जत की नजर से देखते थे।

राय मोये के सुपुत्र रायबुलार बहुत धार्मिक विचारो के व्यक्ति थे। वह हिन्दू-मुसलमानो को एक ही मानव सन्तान समझते। विशेषकर वह साधुओ-सतो की सेवा करना अपना कर्त्तव्य समझते। उन्हें इसका बहुत ही शौक था, उनके हृदय मे नफरत नाम की कोई चीज नही थी।

गुरु जी के पिता का नाम महिता कल्याणदास था, मगर तलवडी मे वह महता कालूराम जी के नाम से प्रसिद्ध थे। उनके वश के बारे मे कहा जाता है कि जिला अमृतसर तहसील तरन-तारन में, पट्टेवाल नामी गाव के रहने वाले थे, जिसका नाम बाद में "डेरा साहिब" हो गया। वह बेदी वश मे से थे। महता कालू राम जी राय बुलार के विशेप सलहाकारो मे से थे। वह स्वय उनका बहुत आदर-सत्कार करते थे, वह बहुत दयालु थे। गरीबो के साथ उन्हे दिली हमदर्दी थी। हर किसी के दु ख-सुख मे वह काम आते थे, यही कारण था कि तलवडी क्षेत्र के लोग उन्हे बहुत प्यार करते और सच्चे हृदय से चाहते थे। एक ओर वह जनता के हृदय पर राज्य करते थे दूसरी ओर उन पर रायबुलार का पूर्ण विश्वास था, वह हर विषय मे उनकी सलाह लेते। इतिहास के कुछ लोगो के कथनानुसार गुरुजी की आत्म-शक्ति और ज्ञान की भावना को सबसे पहले राय बुलार ने ही देखा।

नवीन प्रकाश

गुरु नानक देव जी के बारे मे, सबसे पहले उनकी मुसलमान दाई दौलता ने बताया कि यह बालक अनोखी शक्ति का मालिक

नजर आता है। जिस समय इस बालक का जन्म हुआ उस समय वह रोने की बजाए हसा और इस हसी के साथ कमरे मे एक ऐसा अनोखा प्रकाश हुआ जो अपनी प्रकार का नवीन और विचित्र प्रकाश था। यह प्रकाश उस ज्ञान का साक्षी था जो गुरुजी को ईश्वर की ओर से मिला।

गुरु जी के श्रद्धालुओ का यह कथन है कि उस समय के विद्वानो और सतो ने भविष्यवाणी की थी कि बालक बड़ा होकर सारे ससार को एक नवीन मार्ग दिखायेगा। उनके पुरोहित ने गुरु जी का मस्तिष्क देखकर कहा—

"इस बालक के सिर पर छत्र झूलेगा, हिन्दू और मुसलमान दोनो ही इसकी पूजा करेगे। यहा तक कि पशु, पक्षी और प्रकृति के जड़ पदार्थ भी इसके नाम का उच्चारण करेगे।"

यह भविष्यवाणी थी अथवा पुरोहितवाणी, इसका निर्णय स्वय आगे चलकर लोगो ने कर लिया। उनके जन्म पर अनेक लोगो ने भविष्यवाणिया की—कुछ लोगो के कथनानुसार जब महता जी अपने परिवार के ज्योतिषी हरदयाल जी के पास अपने पुत्र के पैदा होने का समाचार लेकर पहुचे तो उन्होने ग्रह-नक्षत्रों का हिसाब लगाते हुये कहा कि ऐसे बालक की जन्मपत्री बनाने से पूर्व अपनी आखो से देखना चाहता हू।

हरदयाल जी ने जैसे ही बालक गुरु नानक देव जी को देखा तो वह कह उठे "यह तो नवीन प्रकाश है। इनके दर्शन करने से तो ऐसे लग रहा है जैसे मैंने साक्षात ईश्वर के दर्शन कर लिये है। मेरा जीवन ही सफल हो गया है।"

पास खड़ी गुरुजी की माता तृप्ता ने जब पुरोहित के मुख से यह शब्द सुने तो वह खुशी से नाच ही तो उठी—उनका यह पहला पुत्र इतना ज्ञानी होगा। उस समय पुरोहितों की बातो पर पूर्ण विश्वास होता था। लोगो के हृदय में इनके लिये बड़ी श्रद्धा थी

इनके कहे हुये शब्दों को ईश्वर की ही आवाज समझा जाना था। पुरोहित जी की भविष्यवाणी सारे गाँव मे फैल गई। लोग धडाधड इस बालक के दर्शनो के लिये आने लगे। नारा गाव का गाव महता जी के घर पर इकट्ठा हो गया था। सब बालक को देखने के इच्छुक थे। वे बारी-बारी दर्शन करते रहे। यह बात एक गाव से दूसरे, दूसरे से तीसरे, इस तरह चारों ओर फैल गई, सब लोग इस नवीन प्रकाश को देखने आये।

नामकरण संस्कार

उस समय की एक निराली और महत्वपूर्ण रस्म थी कि लड़के का नाम यदि उसकी बहन बड़ी हो तो उसके नाम पर रख दिया जाता था। यह बात इस रूप मे दुहराई जाती—यदि लडका बडा हो तो लड़की का नाम लडके के नाम से मिलता-जुलता रख दिया जाता। महता जी के यहा बड़ी लड़की थी जिसका नाम नानकी था, जो इतिहास मे नानकी के नाम से प्रसिद्ध है। बीबी नानकी के नाम पर ही बालक का नाम नानक रख दिया गया।

बालक नानक जी की तो पैदा होने से ही हर बात विचित्र थी। जैसे-जैसे यह बड़े हो रहे थे वैसे-वैसे इनके गुणो के चमत्कार फैलते जा रहे थे, वह अपने साथियो के साथ खेलते भी तो उनको हर बात निराली होती। उन्हे एक स्थान पर बिठाकर सत्य-करतार का पाठ पढाने लगते। यदि कभी अकेले होते तो आलती-पालती मारकर आखे बद करके दोनो हाथ जोडे ऐसे बैठते। जैसे उनकी अमर आत्मा सीधी ईश्वर के साथ मिल गई हो। उस समय उनके चेहरे पर एक अनूठा प्रकाश नजर आता। लोग चकित होकर इस बालक के चमकते मुखडे को देखने लगते।

विद्यार्थी जीवन

जैसे-जैसे वह बड़े होते गये वैसे-वैसे उनकी बुद्धि में एक निराला निखार पैदा होता रहा। उनकी इन आदतों को देखते हुए ही उनके पिता जी ने छोटी आयु मे ही पाठशाला भेजने का प्रबन्ध कर दिया।

जो लोग सारे संसार को पढाने के लिये पैदा हुए हों उन्हें पढाने की शक्ति किसमे हो सकती थी। जैसे ही वह पाठशाला मे पहुचे वैसे ही उनके चेहरे का रग देखकर उनके सहपाठी हाथ जोड़कर खडे हो गये। उनके गुरु ने जब पढाने का यत्न किया तो वह उल्टे उनसे ही प्रश्न करने लगे, ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर उस गुरु के पास क्या हो सकता था। एक ओर ससार को मार्ग दिखाने वाला गुरु था, दूसरी ओर एक पाठशाला का गुरु। इन दोनो की तुलना कौन कर सकता था।

पाठशाला के गुरु ने अपना पूरा यत्न नानक जी को पढाने के लिये लगाया, मगर वह तो स्वय अतर्यामी थे। सब कुछ जानते थे। इन्हें पढाना सरल कहा था। वह उन्हें पाठ पढाते तो नानक जी उलटा उन्हे पाठ पढाना आरभ कर देते। इस बालक की विचित्र आदते और बाते देखकर पाठशाला के गुरुजी को हार माननी पडी, वह तो पढाना चाहते थे और नानक जी उनसे पढना नही चाहते थे। जो कुछ वह पढना चाहते थे गुरु जी को वह सब कुछ नही आता था, इसका फल यह निकला कि नानक जी का मन हर समय उदास रहने लगा, वह कभी भी दिल से पाठशाला न आते, आते भी तो बैठे ही रहते।

पिता महता कालूजी ने जब सारी बाते सुनी तो और भी चिंतित हो गये। एक बाप की भाति उनका भी हृदय सब कुछ सुन कर तड़प उठा। वह अपने एकमात्र पुत्र को पढा-लिखा

कर किसी अच्छे कार्य मे लगाना चाहते थे, मगर उनकी यह आशा बालक नानक पूरी करने के लिये तैयार नही थे। एक दिन तग आकर पाठशाला मे सस्कृत की पढाई वन्द करवा दी गई और उसके स्थान पर मौलवी साहब के यहा फारसी पढने के लिए भेज दिया गया।

विद्या संस्कृत हो या फारसी, नानक जी को तो कुछ पढना नहीं था। यह सब बाते तो जैसे उन्हे पहले से ही मालूम हो। कुछ विद्वानो का तो यह मत है कि गुरु नानक देव कही नही पढे। शायद इस मत से वह यह सिद्ध करने का यत्न करना चाहते, हों कि ससार मे जितने भी महापुरुषो ने अवतार धारण किया है, वह सब के सब अनपढ ही थे, मगर मै उनके इस मत से बिल्कुल ही सहमत नही हूं। यह उनकी अपनी अज्ञानता को तो स्पष्ट कर सकता है, गुरु नानक देव जी के विषय मे कोई बुद्धिमान व्यक्ति यह नही सोच सकता। गुरुजी का जीवन यह बात सिद्ध करता है कि वह अच्छे विद्वान थे। ऐसे लोग जो गुरुजी के बारे में ऐसी राय रखते है, वह इनको समझने मे भूल करते है। यदि ऐसी बात नही तो आओ गुरु जी की वास्तविकता देखे जिसमे हमे उनकी शिक्षा के बारे मे समझने का अवसर मिलता है।

गुरुजी के जीवन मे जैसा कि आगे चलकर हम देखे तो ऐसे अवसर अनेक बार आये, जब उन्होने दूसरे धर्म के बड़े-बडे विद्वानो का बिना सकोच खुलकर मुकाबला किया, अपनी विचारधारा को विस्तार-पूर्वक उनके सामने रखा और इस बात का भी सबूत है कि गुरुजी ने विदेशों मे जाकर अपनी धार्मिक विचारधारा को प्रकट किया, इसमे विशेष कर अरब देशो का भ्रमण है। वहा जाकर उन्होने दूसरे धर्म के लोगो के साथ उन्ही के धर्म के बारे मे खूब बहस की। इससे यह बात सिद्ध होती है कि वह फारसी के अच्छे विद्वान थे। सस्कृत भाषा का भी उनका ज्ञान था। धर्म

के बारे मे जो उपमाएँ है, वे उन्ही संस्कृत के महान ग्रथो मे से है। यही पर नही, उनकी कविताओ मे जिस भापा का प्रयोग किया गया है, उससे भी यह भली भाति सिद्ध हो जाता है कि वह भाषा के बारे मे पूरा ज्ञान रखते थे।

इन सब बातो को सामने रखते हुए मै उन लोगो की इस दलील को नही मानता कि गुरुजी ने शिक्षा नही पाई। यह ठीक है कि उस समय की शिक्षा के अनुसार वह उन लोगो के कहने पर कुछ न पढ पाये हों जो वह चाहते थे, मगर इतना अवश्य है कि उन्होने वह सब कुछ पढा, जिसकी उन्हे ज्ञान के लिये जरूरत थी। बाकी चीजो का अध्ययन वह स्वयं करते रहे।

अब हम उनके फारसी गुरु मौलवी जी की ओर आते हैं। पिताजी ने जब उन्हें वहा भेजा तो उनका कहना मानते हुए वह जाने लगे मगर वहा भी उनका हिसाब वही रहा जो पाठ-शाला में था, अपने सहपाठियों को साथ ले सत्य करतार का पाठ पढाने लगते। मौलवी जी जो पढाते वह उनसे कही आगे जाकर पढने लगते। उन दिनो की एक बात और प्रसिद्ध है।

मौलवी जी नमाज के समय सब बच्चो को नमाज पढाने के लिये खड़ा करते। एक बार जब नानक जी को भी उन्होने नमाज़ पढने लिये साथ खड़ा किया तो नानक जी वैसे के वैसे दीवार के साथ लगकर खडे रहे। जब वह नमाज पढ चुके तो उन्होने क्रोध से पूछा—

"नानक ! तुमने नमाज क्यो नही पढी ?"

नानक जी ने हँसते हुए कहा, "मौलवी जी, मैं आपके साथ नमाज़ कैसे पढ सकता था ? आप तो नमाज़ पढते समय घर पर यह देख रहे थे कही आज मै बकरी को खुली तो नही छोड़ आया, यदि खुली है तो उसे बाध दू।"

मौलवी जी ने जब नानक जी से यह शब्द सुने तो वह आश्चर्य

का काम नानक जी के जिम्मे लगा दिया।

जैसा कि पीछे लिखी बातो से स्पष्ट है कि नानक जी अपने पिताजी की हर आज्ञा का पालन करते थे। जो बात वह कहते वही मानते, इसलिए इस कार्य के लिए भी इनके इन्कार का कोई प्रश्न नही उठता था। वह खुशी से पिता जी की आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार हो गये।

वह सुबह उठते ही भैसों और दूसरे जानवरो को लेकर खेतो मे चले जाते। आप वृक्षो के नीचे बड़े आराम से सोते और जानवर खेतों मे चरते रहते। कुछ लोगों ने देखा कि वह वडे आराम से समाधि लगाये बैठे है। जैसे ईश्वर-भक्ति में लीन हो। एक बार नानक जी जब वृक्ष के नीचे लेटे हुये थे, थोड़े समय पश्चात उसकी छाया वहां से हट गई। उनके मित्रो ने देखा नानक जी पर आई धूप को समाप्त करने के लिए एक काले नाग ने अपना फन फैलाकर छाया कर दी है। यह वात मित्रो ने देखी तो वह आश्चर्य के मारे गाव की ओर भाग खडे हुए…गाव से लोग भागे हुए आए और यह आश्चर्यजनक दृश्य देखकर सबने मुँह में उगलियां डाल ली।

ऐसी एक घटना और घटी। एक दिन नानक जी बड़े आराम से उसी वृक्ष के नीचे लेटे हुए थे। उनकी भैसे एक जाट के खेत में जाकर सारी फसल को खा गईं और नष्ट कर दी। नानक जी ने इस चीज की कोई परवाह न की। रोज की भाति घर आ गये। उस जाट ने गाव में आकर पचायत इकट्ठी की। जवगाव केचौधरी को यह पता चला कि यह सारा दोष नानक जी का है, तो उन्होने कह दिया कि इस सारी हानि को वह स्वय अपनी जेव से पूरा करेगे। मगर जव दूसरे दिन जाट अपने खेतों मे पहुचा तो यह देखकर हैरान रह गया कि उसकी सारी खेती पहले की भाति लहलहा रही हैं। इस वालक की यह सब वाते

अनहोनी ही लगती थी। किसी को यह समझ नही आ रहा था कि यह क्या हो रहा है। इस बालक के अनोखे चमत्कार सबको आश्चर्य मे डाल रहे थे।

यज्ञोपवीत (जनेऊ)

समय के साथ-साथ नानक जी की आयु बढती जा रही थी। अब वह नौ वर्ष के हो गये थे। उस समय धर्म और अधर्म का महान युद्ध आरम्भ हो चुका था। इसीलिये हिन्दू लोग बहुत कठोरता से धर्म का पालन करने लगे थे। वैसे भी उस समय हर हिन्दू नवयुवक को जनेऊ पहनना पडता था। इसलिये नौ वर्ष की आयु में उनके पिता जी ने अपने पुरोहित को बुलवाकर यज्ञोपवीत के समय के लिए महूर्त निकलवाया।

इस रस्म की खुशी में उनके पिता कालूजी ने सब गांव वालो को बुलाकर एक दावत देने की योजना बनाई। जब सब लोग इकट्ठे हो गये और महूर्त का समय हो गया, तो पडित जी ने जनेऊ लाकर नानक जी को बुलाकर पहनने के लिए कहा।

मगर सब लोग नानक जी के मुह से यह शब्द सुनकर हैरान रह गये—

"पुरोहितजी, मैं यह जनेऊ नही पहनूगा। मुझे इस कपास के धागे की कोई आवश्यकता नही।"

महता कालूराम ने जब अपने पुत्र के मुख से यह शब्द सुने तो वह पाव से लेकर सिर तक काप उठे। वह दूर खडे थे। पुरोहित जी और नानक जी आमने-सामने बैठे थे। पुरोहित हरदयाल जी ने कहा—

"बेटा नानक जिद्द न कर। यह हमारा धर्म है, जनेऊ पहनकर तुम अपने धर्म मे वापस आ जाओगे। इसके बिना इन्सान अछूत होता है। इसे डालकर तुम्हे लोक-परलोक मे आदर-मान मिलेगा।

का काम नानक जी के जिम्मे लगा दिया।

जैसा कि पीछे लिखी बातों से स्पष्ट है कि नानक जी अपने पिताजी की हर आज्ञा का पालन करते थे। जो बात वह कहते वही मानते, इसलिए इस कार्य के लिए भी इनके इन्कार का कोई प्रश्न नही उठता था। वह खुशी से पिता जी की आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार हो गये।

वह सुबह उठते ही भैसो और दूसरे जानवरो को लेकर खेतो मे चले जाते। आप वृक्षो के नीचे बड़े आराम से सोते और जानवर खेतो में चरते रहते। कुछ लोगो ने देखा कि वह बडे आराम से समाधि लगाये बैठे है। जैसे ईश्वर-भक्ति मे लीन हो। एक बार नानक जी जब वृक्ष के नीचे लेटे हुये थे, थोड़े समय पश्चात उसकी छाया वहा से हट गई। उनके मित्रो ने देखा नानक जी पर आई धूप को समाप्त करने के लिए एक काले नाग ने अपना फन फैलाकर छाया कर दी है। यह बात मित्रो ने देखी तो वह आश्चर्य के मारे गाव की ओर भाग खडे हुए· गाव से लोग भागे हुए आए और यह आश्चर्यजनक दृश्य देखकर सबने मुँह मे उगलिया डाल ली।

ऐसी एक घटना और घटी। एक दिन नानक जी बडे आराम से उसी वृक्ष के नीचे लेटे हुए थे। उनकी भैसे एक जाट के खेत में जाकर सारी फसल को खा गई और नष्ट कर दी। नानक जी ने इस चीज की कोई परवाह न की। रोज की भाति घर आ गये। उस जाट ने गाव में आकर पचायत इकट्ठी की। जबगाव केचौधरी को यह पता चला कि यह सारा दोष नानक जी का है, तो उन्होने कह दिया कि इस सारी हानि को वह स्वय अपनी जेब से पूरा करेगे। मगर जब दूसरे दिन जाट अपने खेतो मे पहुचा तो यह देखकर हैरान रह गया कि उसकी सारी खेती पहले की भाति लहलहा रही है। इस बालक की यह सब बाते

अनहोनी ही लगती थीं। किसी को यह समझ नही आ रहा था कि यह क्या हो रहा है। इस बालक के अनोखे चमत्कार सबको आश्चर्य में डाल रहे थे।

यज्ञोपवीत (जनेऊ)

समय के साथ-साथ नानक जी की आयु बढती जा रही थी। अब वह नौ वर्ष के हो गये थे। उस समय धर्म और अधर्म का महान युद्ध आरम्भ हो चुका था। इसीलिये हिन्दू लोग बहुत कठोरता से धर्म का पालन करने लगे थे। वैसे भी उस समय हर हिन्दू नवयुवक को जनेऊ पहनना पडता था। इसलिये नौ वर्ष की आयु मे उनके पिता जी ने अपने पुरोहित को बुलवाकर यज्ञोपवीत के समय के लिए महूर्त निकलवाया।

इस रस्म की खुशी मे उनके पिता कालूजी ने सब गाव वालो को बुलाकर एक दावत देने की योजना बनाई। जब सब लोग इकट्ठे हो गये और महूर्त का समय हो गया, तो पडित जी ने जनेऊ लाकर नानक जी को बुलाकर पहनने के लिए कहा।

मगर सब लोग नानक जी के मुह से यह शब्द सुनकर हैरान रह गये—

"पुरोहितजी, मैं यह जनेऊ नही पहनूगा। मुझे इस कपास के धागे की कोई आवश्यकता नही।"

महता कालूराम ने जब अपने पुत्र के मुख से यह शब्द सुने तो वह पाव से लेकर सिर तक काप उठे। वह दूर खडे थे। पुरोहित जी और नानक जी आमने-सामने बैठे थे। पुरोहित हरदयाल जी ने कहा—

"बेटा नानक जिद्द न कर। यह हमारा धर्म है, जनेऊ पहनकर तुम अपने धर्म मे वापस आ जाओगे। इसके बिना इन्सान अछूत होता है। इसे डालकर तुम्हें लोक-परलोक मे आदर-मान मिलेगा।

लो इसे पहन लो, इन्कार न करो ?"

नानक जी हस पडे ओर वोले, "पडित जी ! यह कैसे हो सकता है कि कपास का वना हुआ धागा परलोक मे भी मनुष्य का साथ दे। यह तो शरीर के साथ ही रह जायेगा। परलोक में तो लोग कुछ भी साथ नही लेकर जाते। मुझे तो कोई ऐसा धागा दो जो परलोक मे भी मेरी मदद करे।"

"बेटा नानक ! यह जनेऊ हमारी आत्मा को शुद्ध करता है। हमारे शास्त्रो और धर्म पुजारियों ने हमे यही मार्ग वताया है, अव तुम वताओ कि जनेऊ के बिना रहना चाहते हो ?"

नानक जी फिर मुस्करा कर बोले, "नही पडित जी, मैं इसके बिना नही रहना चाहता।"

"तो वहुत अच्छी बात की तुमने। आओ, अब यह जनेऊ तुम्हे पहना दू।"

"ठहरो पडित जी ! मेरी पूरी बात तो सुन लो। मुझे ऐसे धागे की आवश्यकता है जो न तो गले, न टूटे, न सडे न मैला हो, ऐसे जनेऊ से धर्म और आत्मा को इच्छा अनुसार निभाया जा सके।

दइया कपाह, सतोखु, सूतु जतो गडी सतो वरो
एहो जनेऊ जिया का हई ता पाडे घतो
न ऐहो तुटै न मलो लगै न ऐहो जलै न जाई
धनुसु माणस नानका जो गले चली भाई।

"सो पडित जी ! यदि आपके जनेऊ मे ऐसा धागा है तो मैं पहन लेता हू। यदि यह टूट सकता है, गल सकता है, जल सकता है, तो मुझे क्षमा करो, मै इसे नही पहन सकूगा।"

पडित हरदयाल ने जब यह शब्द नानक जी के मुख से सुने तो वह स्वय आश्चर्य से उनकी ओर देखने लगे। वह इन बातो का उत्तर कहां से दे सकते थे। उनकी बाते तो इतनी महान थी कि वडे-से-वडा विद्वान भी उनका उत्तर नही दे सकता था।

एक ओर पुरोहित जी भी हैरान हुए बैठे थे, दूसरी ओर गांव के दूसरे लोग यह सब कुछ देखकर हैरान हो रहे थे। वह तो यज्ञोपवीत की बधाई देने आये थे, मगर यहां तो हर बात उल्टी होती जा रही थी। वह बधाई उनको दें या नानक जी के विचारों को, जो उनको ज्ञान का नवीन मार्ग दिखा रहे थे।

तीसरी ओर उनके पिता महता कालूराम जी खड़े थे जो इस धृष्टता को सहन नही कर सके। पुत्र ने उन्हे भंयकर अपमान और लज्जा की स्थिति मे डाल दिया था। वह मन-ही-मन में दुखी हो रहे थे। ईश्वर ने एक ही पुत्र दिया था वह भी हर बात में उनसे विरुद्ध होता जा रहा था। जिस कार्य के लिए कहा जाता वह उसका उल्टा ही करते थे। महता कालूराम जी के हृदय की पीड़ा को वह बाप ही जान सकता था। जिसके एकमात्र पुत्र हो और वह उसका कहा न माने। उस समय एक बाप के दिल पर क्या कुछ बीतता होगा! आज तो उनका अपमान भरी बिरादरी में हुआ था।

सब लोग अपने-अपने घरों को जा चुके थे। उनको इस तरह जाते देखकर कालूराम जी के हृदय को बहुत दुख हो रहा था, मगर वह क्या कर सकते थे। सब खुशी के लिए इकट्ठे हुए मगर चिंता के सागर मे डूब गये। एक-एक करके सब लोग जा चुके थे। अब दो-चार उनके मित्र रह गये थे जिन्होने देखा कि वह इस समय बहुत उदास है।

अब वह सब मिलकर कालूराम जी को समझाने लगे और कहने लगे कि तुम्हारा बालक तो अब हाथों से निकलता जा रहा है। यदि अभी से इसका उपाय न करोगे तो पछताओगे।

कालूराम जी दुखी होकर बोले, "भाइयो, अब तुम्ही बताओ कि मैं क्या करू? मेरे सामने कौन-सा रास्ता बाकी रह गया है। मैं तो थक गया हूं, हार चुका हू, अब तुम लोग ही बताओ कि

मै इसका क्या इलाज करू ।" वह दुख के मारे अपने आसू न रोक सके थे ।

"महता जी ! आप उदास क्यो होते है । दिल छोटा करने से कुछ नही बनेगा । हिम्मत से काम लो। दिल छोटा करने से तो और दुख बढेगा ..."

"तो फिर मै क्या करू ? मेरा तो घर लुट रहा है, एक ही पुत्र ईश्वर ने दिया है । वह भी दिन-प्रतिदिन मुझसे दूर होता जा रहा है ।"

"महता जी, हमे तो ऐसा लगता है, नानक जी कुछ बीमार है। इसलिए इन्हे किसी वैद्य को दिखा दिया जाये तो ठीक रहेगा।"

बात दिल लगने वाली थी। डूबते को तिनके का साहरा। दु:खी आदमी तो हर बात पर विश्वास करता है। अत: फैसला हो गया कि नानक जी को वैद्य को दिखाया जाये।

दो-चार दिन तक नानक जी वैसे ही घर से बाहर नही निकले। वह सारा दिन अन्दर ही पडे रहते। न किसी से बोलते न कुछ खाते न पीते। इनकी यह सब बाते और भी चिन्ता-जनक थी।

वैद्य को बुलाया गया। गुरुजी चारपाई पर लेटे हुए थे। उन्होने आते ही कहा कि अपना हाथ दिखाओ ताकि मै नब्ज देखकर रोग को समझ लू।

गुरुजी बहुत प्रेम से हसते हुए बोले, "हे वैद्यराज दु.ख मेरे शरीर मे नही, मेरी आत्मा मे है।"

"नानक जी, तुम्हारी आत्मा को रोग कैसा है ?"

नानक जी बोले—

"दखु विछोडा इक दु.ख भूखा। इकु दुखु सकत वार जगदूता॥
इक दुखु रोग लगै तीन धाइ। बैद मीले दारु लाई॥ १॥

बद न मीले दारु लाई। दरदु होवै दुखु रहै सरीर।

ऐसा दारु लागै न बीर।। १।।– रहाऊ।"

(हे वैद्य मुझे एक दु.ख है कि मै अपने अन्तर से बिछुड़ा हुआ हू, और उससे मिल जाने की भूख मुझे लगी हुई है। ऊपर से बहुत से रोग इस तन को अपने आप ही आ चिपटते है और जीवन का खेल भी थोडे दिनो का है। इसलिए डर लगता है कि क्या मुझे आत्मसाक्षात्कार का ऐसा समय इस जीवन मे ही प्राप्त होगा।)

"मगर आत्मा को यह रोग कैसे लग जाता है?" वैद्य ने पूछा।

"निजी सुख की भूख से। सुखो का भोग ही आत्मा का रोग वन जाता है और उसे जान-बूझकर दूसरो के लिये स्वय सहे जाने से दूर किया जा सकता है।"

वैद्य ने उनके आगे सिर झुका दिया और बोले, "हे गुरुजी! तुम्हारे रोग का इलाज मेरे पास नहीं। आप अपने रोग का स्वयं ही इलाज कर सकते है। मुझे जाने की आज्ञा दीजिये·· मगर इतना अवश्य याद रखिये जिन मां-बाप ने आपको जन्म दिया है, उनका भी तो कोई आप पर अधिकार है।"

नानकजी एक बार फिर हसे और बोले—

"कत की माई बापु कत केरा किदू थवाहु हम आयो।
अगनि बिब जल भीतरि, निपजे काहे, कनि उपाये।।

मेरे साहिवा कऊणा जाणै गुण तेरे।
कहे न जानी अऊगण मेरे।।१।।"

"वैद्य जी नानक जी का मुह ताकते रह गए।
नानकजी के इन शब्दो का उत्तर किसके पास था? सब

थक-हार गये । वैद्य जी चले गये । माता-पिता के हृदय पर फिर निराशा छा गई । उनका पुत्र तो अब उनसे दूर ही होता जा रहा था । उनका हर उपाय असफल ही रहा था । वह हार रहे थे । बालक नानक उनकी किसी बात को मानने के लिये तैयार न थे ।

सच्चा सौदा

इसी प्रकार तीन-चार मास और बीत गये। मां-बाप की तो रातों की नींद उड चुकी थी। वह तो दिन-रात अपने जवान बेटे की ओर देख-देखकर रोते और उदासी देखकर मन-ही-मन मे जलते रहते। वह कर भी क्या सकते थे। उन्होंने उसे पढने भेजा तो पढ न पाया, पशुओ को चराने का काम दिया, वह इसमें भी असफल रहा ; यज्ञोपवीत पहनने के लिये कहा, इन्कार कर दिया : वैद्यजी से दवाई दिलवानी चाही तो न ली, वह [illegible] थे।

एक ओर मा बाप चिता की आग मे जल रहे थे [illegible] नानक जी अपने ससार मे मस्त थे। वह [illegible] बाहर जाने लगे, खेल-कूद में भी [illegible] उदासी दूर होने लगी। मां-बाप [illegible] अपने हृदय के टुकड़े को [illegible] है जो [illegible] न होते होगे।

पिता अपने पुत्र [illegible]

कुछ नहीं उनका पुत्र अब फिर से बाहर जाने लगा है। एक दिन उन्होने सोचा यदि वह नानक जी को कारोवार मे डाल दे तो कितना अच्छा रहे। घर मे बीबी तृप्ता से सलाह की गई तो वह खुश हुई कि बेकार फिरने से तो अच्छा है वह कोई कार्य करे।

इसी चीज को सामने रखते हुये गाव के एक और व्यक्ति भाई बाला को नानक जी के साथ कारोवार मे मदद करने के लिये भेजने का निश्चय किया गया। रात को महता कालू जी ने अपने पुत्र को पास बुलाया और कहा—

"बेटा, अब तुम जवान हो गये हो। अब तुम्हे मेरी मदद करनी चाहिए।

"जैसी आपकी आज्ञा, पिताजी!" नानक जी ने सिर झुका कर कहा।

"मैने सोचा है तुम भाई बाला को साथा लेकर चूहडकाना चले जाओ और वहा से कोई सच्चा सौदा करो जिससे हमे कुछ लाभ हो।"

"सत्य वचन, पिताजी।"

इस कार्य के लिए महता कालू ने बीस रुपये दिये, नानक जी ने बीस रुपये लिये और भाई वाला को साथ लेकर चूहडकाने की ओर चल पडे। पिताजी ने उन्हे सच्चा सौदा करने के लिये कहा था।

वह घर से चल पडे। रास्ते मे कई स्थानो से गुजरते हुए वह एक ऐसे स्थान पर पहुचे जहा कुछ साधू-महात्मा लोग बैठे ईश्वर की भक्ति कर रहे थे। नानक जी की यही तो सब से वडी कमजोरी थी, साधु-सत तो उन्हे बहुत अच्छे लगते थे। पूजा करता हर आदमी ईश्वर-भक्त था। सच्चा सौदा तो वास्तव मे यही था।

उन्होने वह रुपये साधुओ के आगे ढेरी कर दिये और हाथ जोड़कर उनके सामने खड़े हो गये।

"बेटा ! यह रुपये हम साधुओं के किस काम आएंगे ? हम लोगो को इस माया से कोई प्यार नही। हमे तो केवल भोजन चाहिए। हम तो कई दिनों से व्रत रखे हुए है। तुम कोई श्रद्धालु लगते हो, इसलिये हम तुम्हारा भोजन स्वीकार करेंगे।" नानक जी उसी समय बालाजी को साथ लेकर चूहडकाने गये और वहां से खाने-पीने का सामान ले आये और अपने हाथो से भोजन तैयार कर साधुओ को खिलाने लगे।

सब साधू बहुत खुश होकर खाना खाने लगे। खाने के पश्चात् उन्होने नानक जी को आशीर्वाद दिया। नानक जी उनके साथ बैठकर वचन-विलास करने लगे। इन साधुओ की सगत से उन्हे बहुत ही आनन्द आया। वह उनसे जीवन और ईश्वर के बारे मे ज्ञान प्राप्त करते रहे !

वापसी

वहा से जब नानक जी वापस चले तो उनकी आत्मा बहुत खुश थी कि उन्होने बहुत अच्छा कार्य किया था। मगर एक चीज बार-बार उनके सामने आ रही थी कि पिता को क्या उत्तर देगे। जब वह अपने गाव के निकट पहुँच गये तो वह घर जाने का साहस न कर सके। उन्होने अपने साथी बालाजी को वापस भेज दिया और स्वय एक वृक्ष के नीचे बैठ गये।

जब भाई बाला गाव वापस पहुचे तो नानक जी को साथ न देख कालू जी को बडा आश्चर्य हुआ और वह उदास हो गए। जब बाला ने बताया कि नानक जी ने घर आने से इन्कार कर दिया है, वह इस समय उस वृक्ष के नीचे ही विश्राम कर रहे है। उनके अधिक जोर डालने पर बाला ने सच्चे सौदे वाले सारी कहानी सुना दी। उस समय रात काफी बीत चुकी थी। दुःख पर दुःख

था। मां-बाप की तड़पती आत्मा को कहां शाति मिल सकती थी। उनके भाग्य में सुख नही था, उनका हर यत्न असफल हो रहा था।

मारपीट

मा-बाप सदा अपनी औलाद के भविष्य के बारे मे चिंतित रहते है। औलाद भले ही कुछ सोचती रहे, ससार भले ही कुछ सोचता रहे, तड़पता तो उसी का खून है जिसका अपना खून दुख पा रहा होता है।

पिता कालू जी सब बाते सुनकर तड़पे, चीखे, रोये और फिर उन्हें ढूढने के लिए घर से निकल पडे। जब उन्होने नानक जी को आराम से वृक्ष के नीचे लेटे देखा तो उन्हे क्रोध आ गया। उन्होने न कुछ पूछा, न कहा, पहुँचते ही बालक नानक के उठाकर मारना शुरू कर दिया—

नानक जी ने हाय तक न की, वह अपने गालो को बारी-बारी उनके आगे करते रहे, उनकी आखो से आंसू निकल आये।

पिता अपने पुत्र की आखों मे आसू देखकर तड़प उठे। उन्होने रोते हुये अपने सीने से लगा लिया। बाप-बेटे दोनों का प्यार आखो के रास्ते फूट पडा था। दुखी बाप बेटे को मारकर पछता रहा था। क्रोध मे इन्सान राक्षस बन जाता है। नानक जी की आखो मे उन्होने प्रथम बार झाककर उस छुपे प्यार को देखा जिसकी गहराइयों मे वह आज तक नही उतर सके थे, जो प्यार आज तक शात रहा। पुत्र लाख गलत कार्य करे और बाप लाख बार गुस्से हो जाये, मगर बाप का हृदय एक बार अवश्य पिघलेगा।

रायबुलार का दुख

सुबह जब राय बुलार को पता चला कि महता कालू जी ने अपने पुत्र को मारा है तो उन्होने पिता-पुत्र दोनों को अपने पास बुलाया। वह हृदय से नानक जी के पुजारी बन चुके थे, जब उन्होने नानकजी के मुह पर चांटो के निशान देखे तो वह एक बार तड़प उठे और रुआंसी आवाज मे बोले—

"कालू जी! आपने बहुत अनर्थ किया है। इस बालक को मारना किसी प्रकार भी उचित नही था।"

"राय बुलारजी! मैं सब समझता हू। जो मैने किया वह अच्छा नही, मगर यह केवल इस चित्र का एक ही रुख है। यदि आप नानक के पिछले जीवन की ओर ध्यान दे तो पता चले कि एक बाप के दिल पर उस समय क्या बीतती है जब उसका जवान पुत्र पथ-भ्रष्ट हो जाये। मै एक बाप हू जिसकी सारी पूजी उसका एकमात्र यह पुत्र है। आज जब यह कुछ करने योग्य नही रहा तो मेरी आत्मा पर क्या बीत रही होगी, काश कोई एक बार बाप बन कर तो सोचे।

"पहले मैने इसे पढाने के सब यत्न किया मगर इसने पढने से साफ इन्कार कर दिया।"

"दूसरी बार मैने यत्न किए कि यह घर के काम-काज मे ही भाग ले मगर यह उसमें भी पूरा न उतर सका।

"मैंने इसे धर्म प्रवेश के लिये जनेऊ पहनने के लिये कहा तो इसने सब के सामने इन्कार कर दिया।"

"इन सब बातों को भूल कर मैंने इसे पैसे देकर कारोबार के लिए भेजा तो यह दान करके वापस आ गया।

"अब आप ही बताइए कि मै क्या करू? एक बाप होते

कब तक सीने पर पत्थर रखकर इसे बरबाद होता देखता रहू ? इसके भविष्य की चिता मेरे सिवा और दूसरे को क्या हो सकती है।

"क्या मेरा दोष केवल यही है कि मैं एक बाप होने के कारण अपने पुत्र की भलाई के लिये सोचना हू ?

"क्या आप समझते है मुझे अपने पुत्र से प्यार नहीं ? यदि यह बात सत्य है तो मै समझना हू इस ससार में किसी बाप को अपने पुत्र से प्यार नही।"

यह बातें कहते हुये कालू जी की आखे भर आई थी। वह सबके सामने रोने लगे। रायबुलार ने जब उन्हे रोते हुये देखा तो बोले—

"महता जी, दिल छोटा न करो। मै जानता हू एक बाप के नाते आपका जो फर्ज था वह आपने पूरा कर दिया अथवा करने का यत्न किया। यह भी ठीक है कि आप नानक जी के पिता है। आप को यह सबसे अधिक प्रिय है, मगर यहा प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तव में ही नानक जी वह है जो आप इन्हे समझ रहे है। मै तो कहता हू कि आप इन्हे समझने मे बहुत बड़ी भूल कर रहे हैं। यह नानक वह नानक नही है। यह जो भी कुछ करना चाहते है वह हम सब की सोच से बाहर है, मगर एक बात आप अवश्य याद रखे कि यह सारे ससार की भलाई के लिये है। यह एक महापुरुष है जिन्हे हम लोग नही समझ पा रहे। यदि वास्तव मे यही चाहते है कि यह कुछ करे तो इन्हे यहा से बाहर भिजवा दीजिये, कुछ समय बाहर रहकर नानक जी का स्वभाव स्वय ही बदल जाएगा।"

महता कालू जी के मन पर रायबुलार की बातो का बहुत गहरा असर हुआ। उन्होने वचन दिया कि मै आज के पश्चात् नानक जी को कुछ नही कहूंगा, यह जैसा करेगे मैं उसी पर फूल

चढाऊंगा। इनकी शाति से ही मेरे मन को भी शांति मिलेगी · यदि यह घर से वाहर जाना चाहते है तो भी मैं इन्हे नही रोकूगा।"

कालू जी बालक नानक के साथ घर लौट आए।

उस दिन के पश्चात् ही नानक को वाहर भेजने के लिए सोचा जाने लगा।

घर से दूर

बीवी नानकी के पति उन दिनो 'सुलतानपुर' के नवाब के दरबार में ऊचे स्थान पर नौकर थे (यह सुलतानपुर जिला कपूरथला मे है)। जब वह घर पर आये तो उनसे नानक जी के बारे में सब कुछ बताया गया। उनका नाम जयराम था। वह नवाब दौलत खा लोधी के दरबार में दीवान थे। जब उन्होने नवाब से अपने साले नानक जी के काम के लिये बात की तो उन्होने खुशी से उन्हे काम देने का वचन दिया।

सवत् १५४१ सन् १४८४ ई० को नानक जी अपने जीजा दीवान जयराम का पत्र मिलते ही सुलतानपुर आ गये। नवाब दौलत खा उन्हे देखकर बहुत ही खुश हुए और उन्हे सरकारी खाने के भण्डार मे लोगो को खाद्य-पदार्थ बाटने पर लगा दिया। इस स्थान को मोदीखाना कहते थे।

पाठको को स्मरण होना चाहिए कि उस समय किसानो से लगान आदि अनाज के रूप मे लेकर सरकारी खजाने मे जमा कर दिया जाता था, और फिर यही अनाज बाद मे फौजी और दूसरे सरकारी नौकरो को बाटा जाता। जनता भी यहा से अनाज

खरीद सकती थी। गरीब लोगों की मदद के लिये उन्हे मुफ्त भी दिया जाता था।

इस विषय मे सईद मुहम्मद लतीफ के इतिहास से मैं सहमत नही कि नानक जी को वहा अनाज बांटने के लिये लगाया गया। यहां गरीबों को अनाज मुफ्त बाटा जाता था, यदि ऐसी बात सत्य होती तो फिर इतिहास मे इस बात का जिक्र क्यो आता कि गुरु जी के अनाज-भण्डारो का निरीक्षण कई बार किया गया। कई बार लोगो ने उनके विरुद्ध शिकायते भी की कि वह अनाज ठीक नही बाटते, किसी को कम किसी को अधिक दे देते है। यह सब बाते हमे यह सोचने पर मजबूर करती हैं कि सईद मुहम्मद लतीफ का इतिहास यहा ठीक नही। नानक जी सरकारी अनाज भण्डार के मोदी थे।

यह कार्य गुरुजी को बहुत पसन्द आया। वह सुबह उठते और शहर के पास बहती नदिया मे स्नान करते और उसी के तट पर बैठकर घटो समाधि लगाकर ईश्वर-भक्ति मे लीन रहते फिर वहा से सीधे अपने काम पर आ जाते। शाम को काम समाप्त करके फिर शहर से बाहर जगल की ओर निकल जाते। यहा साधु-सन्त लोग ईश्वर की भक्ति मे लीन होते। इन साधुओ की सगत मे बैठकर वह उनसे ज्ञान की बाते करते, जीवन के ज्ञान के बारे मे पूछते। ऐसे महात्माओ की सगत उन्हें बहुत ही रास आई। उनकी आत्मा अब हर समय ज्ञान के प्रकाश कीओर बढने लगी, वह यह सोच-सोचकर खुश होते कि जीवन के वे रहस्य जो आज तक उनसे छिपे रहे—अब धीरे-धीरे खुलते जा रहे थे। सतो ने उन्हे अधेरे मार्ग से हटाकर प्रकाश के मार्ग पर ला खडा किया था। यह सारा ससार उनको एक सपना-सा नजर आने लगा, जहा कि लोग अधेरे मे भटक रहे थे। इस अधेरे को केवल आत्मा का प्रकाश दूर कर सकता था। आत्मा

के प्रकाश के लिये ज्ञान की जरूरत थी···

तेरा ही तेरा

धर्म के शत्रु तो वैसे सदा से चले आये है, मगर धर्मी पुरुष के शत्रुओ की भी कोई कमी नही थी। गुरु जी के अच्छे कामो को देखते हुए सब लोग जलने लगे थे। वह सुबह-शाम भक्ति मे लीन रहते। वह तो अब केवल एक ईश्वर-भक्त थे, तेरा ही तेरा का जाप अब जोर से आरम्भ था। जब अनाज तोलते तो सरकारी अकों के हिसाब से बारह के पश्चात् तेरह का अंक आता था, वह तोलते समय तेरह पर आकर रुक जाते और·· तेरा···तेरा ·· तेरा···करते रहते···चाहे कितना ही अनाज डलता जाता वह तेरा ही तेरा करते रहते · मै तेरा···तेरा ··

इस तेरा ही तेरा के विरुद्ध लोगो ने नवाब के दरबार मे शिकायते आरम्भ कर दी। वह एक ज्ञानी आदमी का भण्डार मे रहना कहा सहन कर सकते थे। नवाब साहब ने पहले तो कोई बात न सुनी। धीरे-धीरे बाते बढने लगी। लोग उनके विरुद्ध पूरी तरह डट गये।

नवाब साहब अभी यह सोच ही रहे थे कि ऐसे विचित्र व्यक्ति को दरबार मे बुलाकर पूछा जाये, मगर दूसरे ही दिन लोगो ने आकर यह सूचना दी कि गुरुजी नदी पर स्नान करने गये थे मगर वह वहा से वापस ही नहीं आये। वह वहीं समाधि लगाकर पूजा मे लीन हो गये ··

गुरु नानक की प्राचीन जन्म-साखी मे लिखा है कि इस समाधि में उन्हे परमात्मा के प्रकाश का अनुभव हुआ। परमात्मा ने उन्हे आशीर्वाद दिया और कहा—

"हे नानक, मै सदा तुम्हारे साथ हू, तुम ससार मे जाओ और लोगो को सत्य मार्ग पर लाओ। मैने अपने नाम से तुम्हे

उपकृत किया है। तुम जिस पर कृपा करोगे उस पर मेरी भी कृपा होगी...।"

कहते है इसके पश्चात् नानक ने परमात्मा के चरणों में सिर झुकाया और वह समाधि से बाहर आये। जब वह नगर मे आये उनके मुख से निकला—

"मै किसी हिन्दू को नही देखता। किसी मुसलमान को नही देखता। मै केवल मनुष्य को देखता हू।"

अधर्म और साम्प्रदायिकता के उस अंधकारपूर्ण युग मे इस प्रकार की विचित्र बात से वहा का काजी बहुत चिन्तित हुआ। यह बात काजी लोग कहां सहन कर सकते थे। गुरु जी के विरुद्ध अन्दर-ही-अन्दर एक साजिश की तैयारी की जाने लगी।

शादी के बंधन में

बीबी नानकी अपने भाई नानक के बारे मे सबसे अधिक ज्ञान रखती थी और सबसे अधिक प्यार भी वही करती थी। जब उन्होने देखा उनका भाई दिन-रात साधु-सन्तो के चक्कर मे रहता है, जो भी वह कमाता है, साधु-सन्तो को खिला-पिला देता है, तो एक बहन होने के नाते उनकी आत्मा तडप उठी। उन्होंने नानक भैया को इस मार्ग से हटाने का एक नया मार्ग निकाला कि इनकी शादी कर दी जाये।

बात घर तक पहुची। शादी की बात चलाई गई। वटाला जिला गुरदासपुर के एक अच्छे वंश मे शादी की बात पक्की हो गई। गुरु जी मा-बाप के एकमात्र पुत्र थे इसलिये शादी बहुत धूमधाम से हुई।

यही से गुरुजी का गृहस्थ जीवन आरम्भ होता है, मगर इतिहास इस बात का साक्षी है कि शादी के पश्चात् भी यह महान आत्मा अपने मार्ग से भटक न सकी। वह तो ईश्वर-भक्त थे,

शादी के बन्धन उन्हें इस भक्ति से कैसे रोक सकते थे। वह घर मे भी रहते तो भक्ति मे लीन रहते, साधु-सन्तों की सेवा और उनके साथ वचन-विलास का काम पहले से वढ गया था, कम नही हुआ था। इनको ये सब आदते उन लोगों के लिये बड़ी विचित्र सिद्ध हो रही थी, जो ईश्वर को समझ नही पाये थे। शादी के पश्चात् भी घर से उनका बहुत समय तक बाहर रहना कुछ लोगों के लिये सोच का विपय बन गया। वह तो हर समय साधुओ-सतों की सेवा मे मस्त रहते।

पागल है पागल

गुरु जी के विरुद्ध साजिशों का जाल बिछाया जा रहा था। अब कुछ लोगों ने उन्हे पागल कहना शुरू कर दिया। कुछ लोगों ने नवाब के पास जाकर कहा कि आपने जिस व्यक्ति को अनाज-भण्डार पर लगा रखा है, वह पागल है। वह सारा अनाज सतों को बांट देता है, पहले-पहल तो नवाव ने इन बातो को न सुना मगर धीरे-धीरे उन पर भी असर होना शुरू हो गया।

एक दिन वह नवाब के सामने पेश किये गये।

"नानक! लोग कहते है कि तुम सरकारी अनाज भण्डार को लुटा रहे हो। तुम साधु-सन्तों के पीछे पागलो की भांति घूमते हो। इस सम्बन्ध में तुम्हे कुछ कहना है ?" नवाब ने पूछा।

इस समय मरदाना नामक एक छोटी जाति का व्यक्ति गुरु जी का साथी बन चुका था। वह ख्वाब बजाने मे बहुत ही होशियार था। गुरु जी भजन गाया करते, मरदाना ख्वाब बजाया करते।

उस समय भी मरदाना उनके साथ ही थे। गुरुजी ने कहा—"भाई मरदाना, तुम ख्वाब बजाओ मैं इसका उत्तर देता हूं।"

मरदाना जी ख्वाब बजाने लगे और गुरुजी ने अपना उत्तर

इन शब्दों मे दिया :

कोई आखै भूतमा को कहे बेताला ।
कोई आखै आदमी नानुक बेचारा ॥
भइया, दिवाना साह का नानुक बउराना ।
हउ हरि बिनू अवरू न जाना ॥ १ ॥ रहाऊ
तउ देवाना जानिये जा मै दीवाना होई ।
एक साहिब बाहरा दूजा अवरू न जाणै कोई ॥२॥
तउ देवाना जाणिये जा एकाकार कमाई ।
हुकमु पछाणै खसम का दूजी अवर सिआण पकाई ॥३॥
तउ देवाना जणी यो जा साहिब घर पिआरू
गंदा जाणै आप कउ अवरू भला संसारू ॥४॥

(कोई मुझे भूत कहता है और कोई बेताल । और कोई कहता है मैं दीवाना आदमी हूं। मैं तो पागलो की भाति अपने ईश्वर का दीवाना हूं। और हरि के बिना किसी को जानता नहीं। पागल उसी को समझना चाहिए जो परमात्मा के भय से दीवाना है, और एक ईश्वर को छोडकर दूसरे किसी को न जाने । उसी की आज्ञा का पालन करे, वास्तव में दीवाना वही है जो अपने ईश्वर से प्रेम करता है, अपने को बुरा और ससार के सभी प्राणियो को अच्छा समझता है) ।

काजो जी जो इस समय नवाब साहब के पास बैठे थे, बोले —"नानक जी ! हिन्दू तो शायद अपने धर्म को छोड़ चुके हों, और शायद यहा आपको सच्चा हिन्दू नजर न आये, मगर मुसलमानों के बारे मे ऐसा सोचना भी गलत है।"

नानक जी मुस्कराये, बोले—

मिहर मसीति सिदुक मुसल्ला, कहू हलालु कुराणि ।
सरम सुनति सीलु रोजा, होहु मुसलमाना ॥

करणी काहबा, सचु पीरु, कमला कर निवाज़ ।
तसबी तातिसु भावसी, नानक रखै लाज ॥

वार माझ सलोक महल्ला ।

नानक जी के मुख से यह शब्द सुनकर काजी जी को और भी क्रोध चढ गया । वह बोले—"हम तो रोज पाच वार नमाज पढ़ते है । तुम क्या जानो कि इनमे क्या रहस्य छुपा हुआ है और इन्ही की कृपा से हम खुदा की दरगाह मे क्षमा कर दिये जायेगे, वे लोग जो हमारे धर्म को नही मानते, नर्क की आग मे जलेगे ।"

गुरु जी हार मानने वाले कहा थे, जल्दी से बोले—

"काजी जी, मै भी रोज पाच नमाजे पढता हू । एक सत्य की, दूसरी हलाल की कमाई की, तीसरी ईश्वर की अनुकम्पा की, चौथी शुद्ध मन की, पाचवी परमेश्वर के निरन्तर स्मरण की । इनसे वडी नमाज इस ससार मे कोई नही ।"

काजी जी अपनी हार मानने के लिये तैयार नही थे, झट से बोल उठे, "हमारे साथ नमाज पढ कर देखो तो तुम्हें स्वयं हीं इसका भेद मालूम हो जायेगा ।"

' जरूर पढ गा, यदि ईश्वर की यही इच्छा है तो मैं इन्कार नही करूगा ।"

नमाज का समय तो हो चुका था, सब लोग तैयार हो गये । गुरु जी भी नमाज पढने चल पडे । यह दृश्य तो बड़ा आश्चर्य-जनक था जब एक हिन्दू नमाज पढने जा रहा हो ।

नमाज पढी गई । गुरुजी एक ओर हट कर खडे हो गये । नमाज समाप्त होते ही काजी जी ने पूछा, "नानक, तुम हमारे साथ नमाज पढने की बजाय हमारा मजाक उड़ा रहे थे ।" उन्होंने नवाब से भी कहा, "देखिए, नानक ने हमारे धर्म का मजाक उड़ाया है ।"

नवाब साहब धर्म के मजाक की बात पर बिगड़ गये और नानक से बोले, "देखो नानक, हम अपने धर्म का मजाक कभी सहन नही कर सकते।"

गुरु जी हसकर बोले—

"नवाब साहब ! मैंने मजाक अवश्य उड़ाया है, मगर मुझसे अधिक मजाक तो काजी जी ने स्वय उड़ाया है, क्योकि जब यह नमाज पढ रहे थे तो इनका मन खुदा की बजाय अपनी नई बिआई घोडी मे लगा हुआ था कि कही उसका बच्चा वही पास वाले कुए मे न जा गिरे।"

काजी जी गुरु जी के मुह से यह शब्द सुनकर लज्जित हो गये। नवाब साहब तो गुरु जी के पहले ही पुजारी बन चुके थे, उन्होंने नानक को पीठ ठोंकी।

नानक जी ने कहा, "नवाब साहब, आज से मैं आपकी नौकरी नही करूगा। अब मैं आजादी चाहता हूं। अब तो मैं सारे ससार के स्वामी की नौकरी करूगा, जिसका सारा ससार नौकर है।"

इतना कहते ही वह मरदाना को साथ लेकर वहा से चल पडे।

एक गायक कवि : एक सन्त

नवाब की नौकरी छोड़ दी गई। इन्हीं दिनो गुरु जी के घर दूसरे सुपुत्र, भाई लक्ष्मीचन्द ने जन्म लिया। उनके प्रथम सुपुत्र का नाम भाई श्रीचन्द था। मगर गुरु जी का मन तो इन दिनों बहुत बेचैन था। वह उसी नदी के किनारे आकर भक्ति मे लीन हो गये। अब वह सब काम-काज छोड़कर अपने आपको ईश्वर के चरणों मे डाल चुके थे, मरदाना उनका साथी था जो रबाब बजाता और गुरु जी अपनी भक्ति-रस मे डूबी हुई कविताए गाते।

एक गायक कवि का रूप

गुरु जी का यह रूप आलोचको और लेखकों ने बहुत कम देखने का यत्न किया है। जैसा पहले अध्याय मे लिखा जा चुका है, धर्म पर अत्याचार की भावना ने भक्ति-काव्य को जन्म दिया, गुरु जी उन सन्त-कवियो की प्रथम श्रेणी मे आते हैं। धर्म की डूबती नैय्या को वचाने के लिये गुरु जी ने अवतार धारण किया। जब चारों ओर अंधेरा छाया हुआ था, धर्म के शत्रु इसे

घेरे खडे थे तो गुरु जी ने इस घोर अंधेरे को प्रकाश मे बदलने के लिये, भक्ति-रस की कविताओ की रचना की। इन रचनाओं मे रस घोलने के लिये, मरदाना ने अपने रबाब के तारों के सुरों को झिझोड़ा।

गीत और संगीत के इस मेल से भक्ति की एक नई लहर निकली जिसमे हजारों नही लाखों-करोडों लोगों ने स्नान किया। धर्म के शत्रु एक बार चीख उठे। मैं यह शब्द बहुत दृढता और विश्वास से कहूंगा कि गुरु जी एक महान् सत कवि थे। ऐसे कवि जिनकी हर रचना अवसर को देखकर ही की गई। उनके ज्ञान के इस प्रकाश को जब हम देखते है तो आश्चर्य होता है। हमारे देश मे ऐसे-ऐसे महान् सत हो गुजरे हैं, जिन्होने हर अवसर पर नई कविता को जन्म दिया तप और त्याग की इस मूर्ति को हम एक गुरु का स्थान देते है। ऐसे गुरु की स्थान जो पूरी मानवता का गुरु थे। उनकी हर कविता ईश्वर-भक्ति से ओत-प्रोत थी।

गुरु जी के बारे मे इससे पूर्व बहुत सारी पुस्तके लिखी जा चुकी है, वह सब की सब प्रमाणित तो है मगर हर एक मे कोई न कोई मतभेद अवश्य है। हर लेखक और आलोचक ने उन्हे अपने रग मे रगकर रख दिया है। इस महान् मानव को समझने के लिये कुछ न कुछ त्याग तो करना पडेगा। उनके महान् चित्र को वास्तविक रूप मे देखने के लिये अपनी आखो से हर धर्म की ऐनक उतारकर मानव धर्म की ऐनक लगानी होगी जो पूज्य गुरु जी का अपना धर्म था, वह किसी एक धर्म की रक्षा के लिये ससार में नही आये थे।वह सब धर्मो से वडे धर्म मानवता के रक्षक थे। न जाने उन लेखको के सीने पर उस समय क्या बीती होगी जिन्होने गुरु जी की वाणी को एक धर्म की वाणी से जोड दिया है। वह तो सब धर्मो की सेवा करने के लिये आये थे। विशेषकर स० करतारसिह, एम० ए० की पुस्तक "जीवन कथा गुरु नानक देव"

विशेष धर्म से प्रशंसा के शब्द तो सुन सके है, मगर वह गुरु नानक देव जी की आत्मा के साथ न्याय नही कर सके। यह बात सूर्य के प्रकाश की भाति रोशन है कि गुरु जी किसी एक विशेष धर्म के लिये नही जिये। न ही वह किसी एक धर्म के प्रचार के लिये आये थे।

उनकी पुस्तक मे किसी एक धर्म के बारे मे नफरत फैलाने का अर्थ इसके सिवा और क्या हो सकता है कि हम उनकी शिक्षा के साथ ही न्याय न करे—जब वह स्वय ही कहते है—

न कोई हिन्दू न कोई मुसलमाना

अब हम उनकी वाणी को ही यदि गलत रग में पेश करने लगे तो दोष किसका है ? गुरु जी का तो इसमे कोई दोष नही। दोष तो ऐसे लेखको का है जो उन्हे समझ नही पाये। उनकी जरा-सी भूल के लिये लोगो मे एक गलत धारणा जन्म लेती है। इनकी सारी बातो को यदि लिखा जाये तो पाठकगण मार्ग से भटकते है। यह सारी बाते फिर किसी दूसरी पुस्तक मे प्रस्तुत करने का यत्न करूगा, क्योकि इस पुस्तक का सम्बन्ध केवल किशोरों तक है, इसलिये बहुत सारी बातो को छोड़ना पडेगा। हमे गुरु जी के बारे मे ही बाते करनी और जानकारी प्राप्त करनी है, इसलिये भी इसे छोड देते है।

रिश्तेदारों की घबराहट

गुरु जी ने जब नवाब की नौकरी छोडी तो उस समय उनके घर मे दो पुत्र थे। इन हालात मे उनका नौकरी छोड़कर संन्यास ले लेना, अथवा घर छोड़कर जगल मे पूजा-पाठ करना, सब रिश्तेदारों को चिंतित कर सकता था। बात सुल्तानपुर से तलवडी, बटाला तक पहुची। जिस भी रिश्तेदार ने सुना वह भागा हुआ सुल्तानपुर पहुंचा। सब इकट्ठे होकर जगल में

गुरु जी के पास पहुंचे ।

सबसे पहले महता कालू जी ने आगे होकर कहा—

"देखो बेटा नानक ! अब मैं बूढा हो गया हूं और तुम मेरे बुढापे के सहारे हो। तेरी मां बूढी हो चुकी है, अब हम दोनों तुम्हारी ओर देख रहे है। इस उम्र मे तुम ही हमारी सेवा कर सकते हो, तुम्हारे बिना हमारा कौन है इस दुनिया में ?"

नानक जी बड़े आराम से सब बाते सुनते रहे, फिर हसते हुये बोले—"पिताजी ! आप यह क्यों कहते है कि मेरा कोई नही। यह आपकी भूल है। आपका ईश्वर है जो सबका स्वामी है, और फिर मेरा जन्म आपकी सेवा के लिये नही हुआ। मैं तो मानव जाति की सेवा के लिये यहा आया हू। इसलिये पिताजी, मुझे आशीर्वाद दीजिये कि मैं मानव जाति की सेवा कर सकू। आप मेरे पिता है। आपसे बड़ा परमपिता है, जो इस ससार का पिता है, मुझे उस परमपिता की आज्ञा का पालन करने दीजिये।"

महता कालू जी उनका उत्तर सुनकर चुप हो गये।

इसके बाद बाबा मूलचन्द जी गुरु जी के श्वसुर आये और कहने लगे—

"बेटा नानक ! तुम मेरी बेटी और अपने पुत्रों की ओर देखो। उनका क्या होगा ? उनका लालन-पालन कौन करेगा ?"

"बाबाजी ! आप भी मेरे पिता योग्य ही है, आप अपने दोहतो और पुत्री की चिन्ता न करे। इनकी रक्षा ईश्वर करेगा। यह सारा ससार मेरा देश है, मानवता मेरा धर्म है, मुझे ईश्वर ने पूरी मानव जाति की सेवा के लिये भेजा है। और मै पहले अपने ईश्वर की आज्ञा का पालन करूगा, इसलिये आप मुझे इस शुभ कार्य को पूरा करने का आशीर्वाद दे।"

बाबा मूलचन्द जी अब क्या उत्तर दे सकते थे, उन्हे तो अपनी पुत्री और दोहतों की हालत देख-देखकर तरस सा रहा

था। गुरु जी के आगे वह बोल नही सकते थे, घर की हालत देख-कर चिन्ता से दु खी हो रहे थे।

माता तृप्ता जी इस समय अपने पुत्र की हालत देखकर मन-ही-मन मे दुःखी हो रही थी। कोई भी मा चाहे कैसी भी क्यो न हो अपने पुत्र को जुदा करके खुश तो नही हो सकती, फिर माता तृप्ता तो एक आदर्श मा थी जिनका एकमात्र पुत्र घर त्यागकर जा रहा था। एक मां के हृदय की हालत तो कोई ऐसी ही दु खी मा समझ सकती है। उस मा की आखो से ममता आसुओ के मार्ग से फूट रही थी।

मगर नानक जी तो इस दुनिया के रिश्ते तोड चुके थे, उन्होंने सत्य करतार से अपना सम्बन्ध जोड़ लिया था। उनके सामने तो इस समय मानवता की आखो से बह रहे आंसू थे। उन्होंने अपनी माता के चरणो की धूल अपने पाव को लगाते हुए कहा—

"मा ! तुम जानती हो, आपसे ऊपर एक और जगतमाता है जिसकी सेवा के लिये मै जा रहा हू। मुझे अपने कर्त्तव्य का पालन करने दो। तुम्हारा पुत्र एक महान कार्य के लिये जा रहा है, इसे जाने दो।"

जब सब ही थक-हारकर एक ओर खडे हो गये तो उनकी पत्नी माता सुलखणी ने अपनी झोली आगे फैलाते हुए कहा—

"हे नाथ ! आप हमे छोडकर जा रहे है। मेरा नही तो इन बच्चो का ख्याल करो। इनको आपके बिना कौन सभालेगा ?"

"सुलखणी ! इनको सभालने वाला ईश्वर है, वह ईश्वर जो हमें जन्म देता है, वही हमारा पालन-पोषण करता है। उसी ईश्वर की इच्छा से मैं यहा से जा रहा हू। मुझे खुशी से जानें दो। मै अपना कार्य पूरा करने के पश्चात् फिर आऊगा। रोने से किसी चीज का उपाय नही होता। ईश्वर तुम सबकी रक्ष

करेगा ! वह सदा तुम्हारे अग-संग रहेगा ।"

इसके पश्चात् बीबी नानको ने उन्हे रोकने का यत्न किया, क्योंकि बीबी नानकी का अपने भैया से वहुत ही प्यार था, इसलिये सबको विश्वास था कि उनके कहने पर नानक जी अवश्य घर वापस चले जाएगे ।

मगर नानक जी ने अपनी बहन के सामने हाथ जोड़ते हुए कहा, "बहन ! तुम काहे को चिन्ता कर रही हो। जिस समय भी तुम मुझसे मिलने की इच्छा प्रकट करोगी मै तुमसे मिलने आ जाया करूंगा ।..."

बीबी नानकी भैया के मुह से यह शब्द सुनकर हैरान रह गई, "यह तो अनहोनी है ।"

नानक जी मुस्कराये और कहने लगे, "बहन नानकी ! मैं अनहोनी को होनी करके दिखाऊगा ।"

यात्राएं

नीचां अदरि नीच जाति नीची हू अति नीच ।
नानक तिनके सग साथ बडियां सू क्या रीख ।।

(नीची जातियो में जो नीचे है और उनमें जो और भी नीचे है, नानक सदा उनके साथ है, उसे बडो से कुछ लेना-देना नही है) ।

गुरु जी तो अब दुखियो के साथी बन गये थे । घर-बार का सारा बोझ उन्होने त्याग दिया था । वह तो स्थान-स्थान पर घूमते हुये ईश्वर-भक्ति का सदेश लोगो तक पहुचा रहे थे । मरदाना उनका साथी था जो रबाब बजाता । गुरुजी भजन-विलास करते । लोगों की भीड़ हर स्थान पर उनके आसपास इकट्ठी हो जाती । गुरुजी उन को धर्म-मार्ग पर चलने का उपदेश देते । इसमे किसी भी विशेप धर्म का प्रचार नही था । वह केवल लोगो को ईश्वर-भक्ति के लिये कहते । उन्हें बताते कि हर इन्सान को बुराई से दूर रहना चाहिये ।

अमृतसर में

दोनों को जिधर रास्ता मिलता चल पडते। जिधर गुरु जी के पांव उठते वही उनकी मजिल हो जाती। चलते-चलते वह सुलतानविंड के निकट एक साफ जल वाले छोटे से तलाव के किनारे पहुंच कर बैठ गये। यह स्थान काफी साफ-सुथरा था। किनारे पर एक बेरी वृक्ष था। बस उसी के नीचे बैठकर गुरु जी पूजा-पाठ करते रहे। जब चलने लगे तो मरदाने से कहा—

"यहां पर एक महापुरुष हर मन्दिर स्थापित करेगा। यहा से हर प्राणी को सुख-शाति मिला करेगी।"

उसी तलाब वाले स्थान पर अमृतसर का अमृतसरो वर है, जिसके बीच में हर मंदिर साहिब ऐतिहासिक गुरुद्वारा है, जो आज भी हमें गुरुजी का अमर सदेश सुनाता है। यहां लाखों यात्री आत्मा की शाति के लिये जाते है और पवित्र सरोवर मे स्नान करते है, यही गुरु की नगरी अमृतसर है, जो आज हमें गुरु जी की याद दिलाती है।

सईदपुर में

यहां से गुरु जी वापस अपने घर की ओर चल पड़े। रास्ते मे वह हर स्थान पर रुकते और लोगो को बुराई के मार्ग से हटाकर भक्ति-मार्ग की ओर चलने के लिये कहते, बहुत सारे लोग उनके अनुयायी बनते जा रहे थे। अधर्म के विरुद्ध उन्होंने धर्म और ज्ञान की शात तलवार उठा ली थी। तप और त्याग की यह मूर्ति ईश्वर-भक्ति में लीन होकर ससार की हर चीज को भूलती जा रही थी। उनके होठों पर हरि नाम था। अपने परमात्मा का··· जिसकी माला वह दिन-रात जपते। भेस-भूषा के बारे में इतिहास-कार लिखते है कि उनके सिर पर नकीली तुर्की टोपी, भगवा

लम्बा चोगा, सीधी धोती, जो भेस-भूषा उदासी साधुओं से मिलती थी मगर इस प्रकार का कोई साधु लोगों ने नहीं देखा था, अब गुरु जी वापस अपनी गांव तलवडी के पास सईदपुर मे आ गये ।

भाई लालों के घर

गुरु जी सईदपुर मे एक परिश्रमी व्यक्ति भाई लाली के घर ठहर गये, सारे गाव वाले हैरान थे कि गुरु जी एक छोटी जाति के व्यक्ति के घर क्यो ठहरते हैं जबकि वह स्वयं इतने ऊचे वंश से सम्बन्ध रखते हैं, फिर उनका अपना घर भी है । मगर इसके बावजूद भी वह एक नीच व्यक्ति के घर में धूनी रमाये बैठे है ।

उन्हें क्या पता था कि गुरुजी इस ससार से वहुत आगे निकल गये है । तेरी-मेरी, छोटे-बड़े का सारा भेद-भाव तो वह कब के समाप्त कर चुके हैं । उनका जीवन एक साधारण व्यक्ति का जीवन नही रहा, मोह-माया के रिश्ते तो उन्होंने कब के छोड़ दिये है ।

वह तो अब सुबह से शाम तक भाई लाली के घर मे बैठकर अपने ईश्वर को याद करते, पूजा-पाठ मे मग्न रहते । भाई मर-दाना रबाब बजाता और वह भजन गाते । उनकी शोभा तो सारे गांव मे फैली, गाव से निकल कर दूसरे गाव तक फैल गई, लोग यह समझ गये कि दुखियो का सच्चा साथी इस धरती पर आ चुका है । उन्हे गुरु जी के भजनो से जीवन का सच्चा आनन्द मिलता और वह उनकी सेवा मे बैठकर कीर्तन सुनते ।

ब्राह्मणों और मुल्लाओं की चिन्ता

गुरु जी के कीर्तन की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इसमें जात-पात और धर्म का कोई प्रश्न नही था । वह किसी धर्म का विरोध नही करते थे । किसी को बुरा नही कहते थे । उनका एक

ही उपदेश था—सब इन्सान एक है। यहां कोई छोटा नहीं, कोई बड़ा नही। ईश्वर ने सव को बरावर पैदा किया हे। ईश्वर एक है। उसका नाम लेना हर प्राणी का कर्तव्य है।

ब्राह्मण और मौलवी लोग यह वाते कहां सहन कर सकते थे। लोग मन्दिरो-मस्जिदों को छोड़कर गुरुजी का कीर्तन सुनने के लिये आ रहे थे। गुरु जी की सगत मे उनको जो आनन्द मिलता, वह तो न मदिर मे था न मस्जिद मे। वहा तो खाली एक धर्म की बातें होती थी, यहां तो सब धर्मो को इकट्ठा कर दिया गया था। किसी धर्म को बुरा नही कहा जाता था। सव धर्म महान थे। जीवन का एक ही मार्ग है, वह है सच्चे हृदय से ईश्वर की पूजा करना, जो मन्दिरो-मस्जिदो के अलावा भी कही बैठ कर की जा सकती है। ईश्वर किसी एक स्थान पर कैद नही। वह तो हर स्थान पर मौजूद है। उसकी लीला न्यारी है। वह सब का सच्चा साथी है।

तेरे नाम अनेका, रूप अनता।
जेता कीता, तेरा नाऊ।
बिणु नावै, नाही को थाऊ॥

इस प्रकार की वाणी सुनकर कौन गुरु जी का मुरीद नही वनता। अब तो शेख-ब्राह्मण दोनों मिलकर गुरु जी के विरुद्ध साजिशे करने लगे थे। मगर गुरु जी को इन सब बातो से क्या लेना था। वह जानते थे जिस शुभ कार्य का बीडा हमने उठाया है उसमे तो यह रुकावटे आयेगी ही।

क्या गुरु जी प्रथम साम्यवादी थे ?

गुरु जी का यह रूप आज तक आलोचकों और लेखको से छुपा रहा है। उनकी बातों से यह बात स्पष्ट थी कि वह छोटे-बडे के भेद को समाप्त करना चाहते हैं। वह गरीबों के सच्चे मित्र और अमीरों से यदि घृणा नही करते थे तो दूर अवश्य रहते थे।

उन्हे गरीबो से सच्चा प्यार था। यह ठीक है आज हम ऐसे व्यक्ति को साम्यवादी कह देते है, मगर गुरु जी ने इस मत को सबसे पहले चलाया। इसका नाम भले उस समय कुछ नही रखा गया था, मगर रूप यही था।

इस उदाहरण को हम यहा देखते है—

पापा बाज न इकट्ठी हुदी
मीया सग न जाई

इस बन्द के लिये गुरु जी के जीवन वह घटना हमारे सामने आ जाती है, जब उन्हे इलाके के बडे अमीर भागो मलिक ने खाने का निमत्रण दिया। इस खाने पर सब ब्राह्मण लोग निमत्रित थे। एक साधु के नाते सुनने के लिए उन्होने गुरु जी को बुलाना भी जरूरी समझा, मगर गुरु जी को तो इन बडे लोगो से नफरत थी। वह जानते थे कि यही लोग गरीबो पर अत्याचार करते है। इनका भोजन खाना पाप है। उन्होने भागो मलिक का निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया।

भागो ने जब यह सुना कि गुरु नानक देव ने मेरा निमत्रण अस्वीकार कर दिया है तो वह क्रोध से जल उठे। यह तो उनकी बेइज्जती है। एक साधारण साधु उनका सबके सामने अपमान करे। वह गाव के बडे आदमी थे, ऐसा अपमान कहा सहन कर सकते थे। उन्होने उसी समय सरकारी नौकरो को कहा कि जाओ उन्हे जबर्दस्ती उठा कर लाओ।

सरकारी अहलकार इसी काम के लिये तो हर समय बड़े आदी थे। ऐसी आज्ञाओ का पालन करने के लिये तैयार रहते थे। हुकम होते ही भागे हुये गये, गुरु जी को उठा कर ले आये।

गुरु जी के स्वभाव मे क्रोध तो नाम मात्र भी नही था, सहनशक्ति ईश्वर ने उनमे कूट-कूट कर भारी हुई थी। वह बड़ी शांति से बैठ गये।

भागो मलिक बड़े क्रोध से बोले—

"नानकजी! तुमने हमारा निमंत्रण अस्वीकार क्यों किया?"

गुरु जी को क्रोध नही आया, वह बहुत शांति से मुस्कराये और बोले—

"सुनो भागो मलिक, हम साधु हैं और ईश्वर के भक्त हैं। हम जानते है तुम्हारी सारी कमाई गरीबों का खून चूस-चूस कर इकठ्ठी की गई है, हम ईश्वर के भक्त केवल नेक कमाई से ही रोटी खाते हैं।"

"क्या आप समझते है मेरी कमाई नेक नही?" भागो एक बार फिर तड़प कर बोला।

"देख भागो! हम इस संसार को त्याग चुके है। हम न तो तेरे इस क्रोध से डरते है और न ही और किसी के क्रोध से। हम केवल ईश्वर से डरते है। वह ईश्वर जो सबका सखा है। हमनें तुम्हारे भोजन को इसी लिये अस्वीकार किया है कि यह भोजन जिसे स्वादिष्ट और अच्छा कहते हो वास्तव में इसमें गरीबो का रक्त मिला हुआ है, क्योकि तुम्हारा सारा धन गरीबों का खून चूस कर इकठ्ठा किया गया है। यह हरामखोरी और अन्याय से इकठ्ठा किया हुआ धन है। इस धन का भोजन खाकर बुद्धि भ्रष्ट होती है। शरीर मे अनेक प्रकार के रोग पैदा होते है। इसलिये हमने इस बुद्धि को नष्ट करने वाले और रोग पैदा करने वाले भोजन को खाने से इन्कार कर दिया।

मलिक भागो ने गुरुजी का उतर सुना, वह समझ गए जो गुरु जी ने कहा है वह गलत नही मगर इसका प्रश्न उठता था कि वह अपने नौकरो के सामने अपना अपमान कैसे सहन कर लेते वह बोले—

"गुरुजी! जब आप एक नीच जाति के इन्सान के घर रोटी खा सकते है जिसके साथ छूने से भी धर्म भ्रष्ट होता है, तो क्या

मैं उससे भी गिरा हुआ इन्सान हू ? क्या उसके गंदे खाने से दूध निकलता है, जो मेरे खाने मे नही।"

इसके उत्तर मे गुरुजी ने जो कहा वह आज के साम्यवादी सोच भी नही सकते थे। क्योकि गुरुजी सच्चे गरीबो के सेवक थे, वह नारेबाज साम्यवादी नही थे, जैसा कि आजकल के साम्यवादी नेता हैं।

सुनिये गुरुजी का उत्तर।

"भागो, यदि यही बात है तो सुन। उसकी सूखी रोटी मे शहद और दूध भरा हुआ है, वह सब उस धर्मी व्यक्ति की मेहनत की कमाई है। मेहनत की कमाई मे दूध और शहद मिला होता है। जो पैसा लोगो के हृदयो की खुशियो मे कुचल कर इकट्ठा गया हो, उससे खून निकलता है। यदि आप समझते हैं कि ऊंची जात के होने के कारण आप बड़े बन गये हैं तो इसके बारे मे भी सुनो—

"नीची जाति के लोग वास्तव में वह है जो ईश्वर को भुला बैठे हैं, और इस नाम से दूर रहते हैं। यह जाति भेद खाली मन का वहम है। सभी उस सच्चे ईश्वर की छत्रछाया तले रहते हैं। सबमे एक ही आत्मा है जिसमें ईश्वर का प्रकाश है। वास्तव में ऊची जाति का वही है जिसके ऊपर ईश्वर की मेहर है, उसकी नजर सीधी है। किसी इन्सान को हम इसलिये नफरत नही कर सकते कि वह छोटी जाति का है। सब इन्सान एक हैं। सभी ईश्वर की सन्तान है।"

यह शब्द हमें गुरुजी की महानता की याद दिलाते रहेगे मगर भागो अभी तक नही माना, वह फिर बोला—

"गुरुजी ! आपकी सब बाते यदि सत्य भी है तो भी आप बताए जब सब ब्राह्मण और दूसरी ऊची जातियो के लोग मे घर मे खाने के लिये आ गये तो आप क्यों नही आये

आपके कई साथी साधू भी खाना खाने आये थे। क्या आपने मुझे उस नीची जाति के आदमी से भी पतित समझा ?"

"भागो जी ! आपने खाना खिलाना था न, जिनका दिल किया वह खा गये, जिसका दिल नही माना वह नही आया। इसमे कोई जबरदस्ती वाली बात तो नही है। दान जबरदस्ती तो नहीं दिया जाता। यह तो लेने वाले की इच्छा पर निर्भर है कि वह इसे लेना चाहता है कि नही, फिर मैं स्वादिष्ट भोजनो को पसन्द ही नही करता। मै साधू हू, मैं इन सब चीजो से आगे निकल चुका हू। यदि आप समझते है, भाई लाली नीच जाति का है तो अपने घर से ब्रह्म भोज का एक पूडा मगाओ और भाई लाली के घर से सूखी रोटी।"

आज्ञा का पालन हुआ। दोनो घरो की रोटियां गुरुजी के सामने रख दी गई। एक ओर थाली मे सूखी बाजरे की रोटी पड़ी थी, दूसरी ओर थाल मे सजे हुये घी मे बनाये हुये पूडे थे।

गुरुजी ने एक हाथ मे घी में तला हुआ पूडा दबाया और दूसरे मे सूखी रोटी के टुकड़े को ·

देखने वाले यह विचित्र दृश्य देखकर अपने दिल की धड़कनों पर काबू पाने के यत्न आरम्भ कर दिये।

भाई लालो की सूखी रोटी मे से दूध की धार निकल रही थी। दूसरे हाथ मे भागो मलिक के स्वादिष्ट भोजन मे से खून की धारा निकल रही थी।

भागी की आखो से अहकार के पर्दे हट गये, आत्मा से गन्दगी साफ हो गई, अधेरा दूर हो गया। वह गुरुजी के चरणो मे हाथ जोडकर गिर पड़ा।

"पूज्य गुरुजी ! मेरे पिछले पापो को क्षमा कर दो। मैंने जीवन को जो समझा वह अज्ञानता थी, आज मुझे जीवन का मार्ग दिखा दिया है। मै आज तक अंधेरे मे भटकता रहा हू। आप मुझे

तुम हो कि घर के पास आकर भी घर से दूर बैठ गये हो।"

गुरुजी सब बाते सुनकर हस दिये और बोले—

"मै केवल आपका ही पुत्र नही, मैं सर्वप्रथम अपने स्वामी ईश्वर का पुत्र हूं। मुझे आपकी सेवा के लिये ही नही भेजा गया, बल्कि विश्व के हर इन्सान की सेवा के लिये भेजा गया है। इस समय सारे ससार में अधर्म फैल रहा है। मुझे मानवता धर्म की रक्षा करनी है, जो मैं घर में बैठकर नही कर सकता। मेरा कार्य बहुत महान है। मेरा घर हर उस स्थान पर बन जाता है जहां मैं पहुंच जाता हू। वहा के लोग मेरे माता-पिता, भाई-बहन, बेटी-बेटे बन जाते है। इसलिये आप मुझे मोह-माया के जाल में जकड़ने का यत्न न करे। इन्हे तोडकर मै कब का मुक्त हो चुका हूं, अब दुबारा इन्हें नही पहनना चाहता। मेरे परम पिता परमात्मा ने मुझे मानव-सेवा के लिये भेजा है, इसलिये मुझे वही करने दीजिये। मेरा ईश्वर सबका स्वामी है, वह सबका दाता है, वह मेरा करतार है। वही आपका और मेरे बच्चो का ख्याल रखेगा। यह बच्चे मेरे करतार के बच्चे है, वह इनकी रक्षा करेगा।"

गुरुजी की बाते इतनी स्पष्ट और सत्य से भरी हुई थी कि उनका उत्तर किसी के पास नही था। वह इस संसार के प्राणी रहे कब थे। उनकी आत्मा के सारे के सारे तार ईश्वर से मिले हुये थे। उनकी आखो से ज्ञान का प्रकाश छलक रहा था। वह तो सबके साथी थे।

जब गुरुजी किसी प्रकार भी न माने तो उनके पिताजी ने रोते हुए कहा, "बेटा और कुछ नही···इस बाप के लिये तो कुछ दिनों के लिये मेरे घर में अब पवित्र चरण डालकर उसे पवित्र कर दो। वह घर भी तो इसी ससार के एक प्राणी का घर है, जो तुम्हारा बाप भी है।"

नानकजी पिताजी की इस बात को मान गये। उनके क–

चोरों को भक्ति-संदेश

जउ तउ प्रेम खेलण का चाओ
सिर धरि तली गली मेरी मे आओ

सईदपुर से गुरुजी तलवंडी अपने गांव वापस आ गये, परन्तु वह अपने घर नही गये । गाव से बाहर ही एक वृक्ष के नीचे डेरा लगाकर पूजा-पाठ मे लीन हो गये । लोगों की भीड़ तो हर स्थान पर उनके साथ रहती थी ।

जब मां-बाप को पता चला तो उनकी आत्मा अपने पुत्र को देखने के लिये तड़प उठी । वह उन्हे लेने के लिये जगल मे पहुंचे । महता कालूजी के साथ उनके भाई गुरुजी के चाचाजी भी आये । उन्होने आगे बढकर अपने पुत्र को गले से लगाया, जो अब पूर्ण रूप से साधू हो चुका था ।

बेटे-भतीजे से प्यार करने के पश्चात् कालू जी और उनके भाई ने नानकजी से कहा, "बेटा, अब तुम घर चलो, वहां तुम्हारी पत्नी, पुत्र इन्तजार कर रहे है । तुम अपना घर क्यो छोड़ चुके हो ? घरवाले तुम्हारी प्रतीक्षा मे सूख गये है । कुछ तो हम बूढे लोगो का ख्याल करो । हम तो सदा तुम्हे याद करते रहे है, मगर

तुम हो कि घर के पास आकर भी घर से दूर बैठ गये हो।"

गुरुजी सब बाते सुनकर हस दिये और बोले—

"मै केवल आपका ही पुत्र नही, मैं सर्वप्रथम अपने स्वामी ईश्वर का पुत्र हूं। मुझे आपकी सेवा के लिये ही नही भेजा गया, बल्कि विश्व के हर इन्सान की सेवा के लिये भेजा गया है। इस समय सारे ससार मे अधर्म फैल रहा है। मुझे मानवता धर्म की रक्षा करनी है, जो मैं घर मे बैठकर नही कर सकता। मेरा कार्य बहुत महान है। मेरा घर हर उस स्थान पर बन जाता है जहां मैं पहुंच जाता हू। वहा के लोग मेरे माता-पिता, भाई-बहन, बेटी-बेटे बन जाते है। इसलिये आप मुझे मोह-माया के जाल में जकड़ने का यत्न न करे। इन्हें तोड़कर मै कब का मुक्त हो चुका हूं, अब दुबारा इन्हे नही पहनना चाहता। मेरे परम पिता परमात्मा ने मुझे मानव-सेवा के लिये भेजा है, इसलिये मुझे वही करने दीजिये। मेरा ईश्वर सबका स्वामी है, वह सबका दाता है, वह मेरा करतार है। वही आपका और मेरे बच्चो का ख्याल रखेगा। यह बच्चे मेरे करतार के बच्चे है, वह इनकी रक्षा करेगा।"

गुरुजी की बाते इतनी स्पष्ट और सत्य से भरी हुई थी कि उनका उत्तर किसी के पास नही था। वह इस ससार के प्राणी रहे कब थे। उनकी आत्मा के सारे के सारे तार ईश्वर से मिले हुये थे। उनकी आखो से ज्ञान का प्रकाश छलक रहा था। वह तो सबके साथी थे।

जब गुरुजी किसी प्रकार भी न माने तो उनके पिताजी ने रोते हुए कहा, "बेटा और कुछ नही ··इस बाप के लिये तो कुछ दिनो के लिये मेरे घर मे अब पवित्र चरण डालकर उसे पवित्र कर दो। वह घर भी तो इसी ससार के एक प्राणी का घर है, जो तुम्हारा बाप भी है।"

नानकजी पिताजी की इस बात को मान गये। उनके क-

पर वह कुछ दिनो के लिये घर मे रहने के लिये तैयार हो गये।

घर मे पहुचते ही उनके पुराने मित्र, सारे सम्बन्धी और गांव के दूसरे लोग उनके इर्द-गिर्द इकट्ठे हो गये। इन सबके साथ गुरुजी हरि कीर्तन करने लगे, ईश्वर का नाम लेने लगे। चारो ओर हरि नाम का प्रचार होने लगा। रायबुलार भी अपने गुरु के दर्शनों के लिये चरणों मे प्रणाम करके आशीर्वाद लिया। वह गुरुजी का यह रूप देखकर अति प्रसन्न हुये। आज बालक नानक एक गुरु का रूप धारण किये उनके सामने बैठा था। वह जो दुनिया को जीवन-मार्ग दिखाने के लिये आये थे। उनके माथे पर अनोखी चमक थी, आखो से प्रकाश छलक रहा था, वह सच्चे साधु थे। उन्होंने घर-बार त्याग दिया था, मोहमाया के सारे बन्धन तोड़ दिये थे। उनकी भक्ति-भरी बातों से ज्ञान का रस टपकता था, वह बोलते तो ऐसा लगता जैसे फूल गिर रहे हो।

कई दिनों तक वह तलवडी मे ईश्वर-भक्ति का प्रचार करते रहे। कई दिनो के पश्चात् गुरुजी की अन्तरात्मा से जाने की आवाज आई। यह ईश्वर की आज्ञा थी इसलिये इसका पालन करना उनका फर्ज था।

वह एक बार फिर लम्बे सफर के लिये निकल पड़े, मरदाना उनका साथी था। जिधर उनकी आत्मा आवाज देती उधर वह दोनों चल पड़ते। जहां रात पड़ जाती सो जाते। सुबह उठते, ईश्वर-भक्ति मे लीन हो जाते। भक्ति के पश्चात् फिर गाते बजाते चल पड़ते।

इस तरह वह चलते-फिरते 'तलबे' पहुच गये (जो आजकल पाकिस्तान मे जिला सुलतानपुर मे है) यहा एक ऐसा आदमी रहता था जिसने एक ओर मस्जिद और दूसरी ओर मन्दिर बनवा रखा था, कोई हिन्दू आता तो उसे मन्दिर मे रात को ठहरने के लिये स्थान दे देता। कोई मुसलमान आता तो मस्जिद में स्थान दे

देता। उसके साथ और भी कई शहर के बेकार और बदमाश लोग थे, जो हर मुसाफिर को अन्दर जाकर लूट लेते और फिर जान से मार देते···

जब गुरुजी और मरदाना उनके पास पहुंचे तो उन्होंने समझ लिया कि यह शिकार तो बहुत अच्छा है। ये व्यापारी होंगे, इनके पास धन बहुत होगा, इसलिये वे खुशी से नाचने लगे और इन दोनों के आगे-पीछे फिर कर उन्हे बिठाया···और प्यार से जलपान करवाया।

गुरु जी तो अंतर्यामी थे, वह बडे प्यार से मुस्कराते रहे और बैठ गये। गुरु जी ने बडे प्यार से पूछा—

"मित्र, तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मुझे हिन्दू तो सज्जनमल कहते है और मुसलमान लोग शेख सज्जन कहते है। वास्तव में मैं कुछ भी नही हूं, न हिन्दू हूं न ही मुसलमान दोनो का सेवक हू, हिन्दू आ जाये मन्दिर मे ठहरा देता हूं, मुसलमान आ जाये उसे मस्जिद मे विश्राम करने की जगह देता हू।"

गुरुजी अपनी बातो में मग्न थे, वह ठग सज्जन और उसके साथी बातों में लगे हुये लूटने की योजनाए बना रहे थे। मरदाना इन लोगों की बाते सुनकर डर रहा था, मगर गुरु जी सब कुछ जानते हुये भी उनके पागलपन पर मुस्करा रहे थे।

थोड़ी देर के पश्चात् सज्जन के साथी खाना लेकर आ गये, यह भोजन बहुत ही स्वादिष्ट था। वह हर व्यक्ति को मारने के लिये यह जहर मिला भोजन लाकर देते और उसे खिलाकर बेसुध करके सब कुछ लूट लेते।

जब गुरुजी के आगे भोजन रखा गया तो वह उस [illegible] को देखकर मुस्कराये। मरदाना चूकि खाने के मामले मे [illegible] था उसका दिल खाने को कर जरूर रहा था।

पर वह कुछ दिनो के लिये घर मे रहने के लिये तैयार हो गये।

घर मे पहुंचते ही उनके पुराने मित्र, सारे सम्बन्धी और गांव के दूसरे लोग उनके इर्द-गिर्द इकट्ठे हो गये। इन सबके साथ गुरुजी हरि कीर्तन करने लगे, ईश्वर का नाम लेने लगे। चारों ओर हरि नाम का प्रचार होने लगा। रायबुलार भी अपने गुरु के दर्शनो के लिये चरणों मे प्रणाम करके आशीर्वाद लिया। वह गुरुजी का यह रूप देखकर अति प्रसन्न हुये। आज बालक नानक एक गुरु का रूप धारण किये उनके सामने बैठा था। वह जो दुनिया को जीवन-मार्ग दिखाने के लिये आये थे। उनके माथे पर अनोखी चमक थी, आखो से प्रकाश छलक रहा था, वह सच्चे साधु थे। उन्होने घर-बार त्याग दिया था, मोहमाया के सारे बन्धन तोड़ दिये थे। उनकी भक्ति-भरी बातो से ज्ञान का रस टपकता था, वह बोलते तो ऐसा लगता जैसे फूल गिर रहे हो।

कई दिनों तक वह तलवडी मे ईश्वर-भक्ति का प्रचार करते रहे। कई दिनो के पश्चात् गुरुजी की अन्तरात्मा से जाने की आवाज आई। यह ईश्वर की आज्ञा थी इसलिये इसका पालन करना उनका फर्ज था।

वह एक बार फिर लम्बे सफर के लिये निकल पड़े, मरदाना उनका साथी था। जिधर उनकी आत्मा आवाज देती उधर वह दोनों चल पड़ते। जहां रात पड़ जाती सो जाते। सुबह उठते, ईश्वर-भक्ति में लीन हो जाते। भक्ति के पश्चात् फिर गाते बजाते चल पड़ते।

इस तरह वह चलते-फिरते 'तलबे' पहुच गये (जो आजकल पाकिस्तान मे जिला सुलतानपुर मे है) यहा एक ऐसा आदमी रहता था जिसने एक ओर मस्जिद और दूसरी ओर मन्दिर बनवा रखा था, कोई हिन्दू आता तो उसे मन्दिर में रात को ठहरने के लिये स्थान दे देता। कोई मुसलमान आता तो मस्जिद मे स्थान दे

देता। उसके साथ और भी कई शहर के बेकार और बदमाश लोग थे, जो हर मुसाफिर को अन्दर जाकर लूट लेते और फिर जान से मार देते…

जब गुरुजी और मरदाना उनके पास पहुंचे तो उन्होंने समझ लिया कि यह शिकार तो बहुत अच्छा है। ये व्यापारी होंगे, इनके पास धन बहुत होगा, इसलिये वे खुशी से नाचने लगे और इन दोनों के आगे-पीछे फिर कर उन्हें बिठाया… और प्यार से जलपान करवाया।

गुरु जी तो अंतर्यामी थे, वह बड़े प्यार से मुस्कराते रहे और बैठ गये। गुरु जी ने बड़े प्यार से पूछा—

"मित्र, तुम्हारा नाम क्या है?"

"मुझे हिन्दू तो सज्जनमल कहते हैं और मुसलमान लोग शेख सज्जन कहते हैं। वास्तव में मैं कुछ भी नही हूं, न हिन्दू हूं न ही मुसलमान दोनों का सेवक हूं, हिन्दू आ जाये मन्दिर मे ठहरा देता हूं, मुसलमान आ जाये उसे मस्जिद में विश्राम करने की जगह देता हूं।"

गुरुजी अपनी बातों में मग्न थे, वह ठग सज्जन और उसके साथी बातों मे लगे हुये लूटने की योजनाए बना रहे थे। मरदाना इन लोगों की बाते सुनकर डर रहा था, मगर गुरु जी सब कुछ जानते हुये भी उनके पागलपन पर मुस्करा रहे थे।

थोड़ी देर के पश्चात् सज्जन के साथी खाना लेकर आ गये, यह भोजन बहुत ही स्वादिष्ट था। वह हर व्यक्ति को मारने के लिये यह जहर मिला भोजन लाकर देते और उसे खिलाकर बेसुध करके सब कुछ लूट लेते।

जब गुरुजी के आगे भोजन रखा गया तो वह उस भोजन को देखकर मुस्कराये। मरदाना चूकि खाने के मामले मे बहुत कमजोर था उसका दिल खाने को कर जरूर रहा था।

गुरुजी ने हसते हुये सज्जन की ओर देखा।

"महात्मा जी ! भोजन खाइये और हमें सेवा का अवसर प्रदान कीजिये।"

गुरुजी ने कहा, "भाई सज्जन! आज तो हमारा व्रत है।"

फिर मरदाने की ओर देखकर सज्जन ने कहा, "आप लीजिये!"

गुरुजी को यही डर था कि क्योकि मरदाना खाने के मामले में कमजोर है, इसलिये वह यह भूल न कर बैठे।

मगर उस समय मरदाने की अतरात्मा जाग उठी और वह कहने लगा, "गुरुजी के विना तो मैं कभी भोजन ही नही करता।"

सारे ठगों के चेहरे उतर गये। उनका षडयत्र फेल हो चुका था। उनका शिकार हाथ से निकला जा रहा था। वह तो बहुत सारी आशाएँ लगाये वैठे थे। इसके लिये उन्होने भोजन पर भी पैसे खर्च किये, मगर अव ?··

सज्जन तो हारने वाला था ही नही। वह तो एक दाव के पश्चात् दूसरा दाव खेलना भली-भाति जानता था। उसने मन-ही-मन मे दूसरी स्कीम बना डाली थी। उसने गुरुजी से कहा, "चलिये, आप अदर चलकर विश्राम कीजिये। आपके बिस्तर बिछवा दिये गये है।"

"सज्जन जी! हम लोग कहा बिस्तरो पर सोते हैं। हमे तो फर्श पर ही लेटना होता है। हम तो यही रात काट लेगे।"

सज्जन की दूसरी चाल भी असफल हो गई थी।

गुरुजी वही फर्श पर आसन लगाकर सो गये थे।

सज्जन दूसरे कमरे मे जाकर अपने साथियो के साथ सलाह करने लगा। वह यह तो जान गया था शिकार अच्छा है, माल भी बहुत अच्छा मिलेगा, मगर यह शिकार हाथो से निकला जा

रहा था। उसके सारे साथी इकट्ठे बठे थे, जो अपने सरदार की स्कीम सुनना चाहते थे।

आखिर सबने मिलकर यह फैसला किया कि रात के समय इन दोनों को तलवार से काटकर फेक दिया जाये। इनका सब माल लूट लिया जाये क्योकि शिकार बड़ा है, इसलिये सारा कार्य सज्जन स्वयं अपनें हाथों से करेगे। बात पक्की हो गई।

रात के दो-तीन बजे के करीब सज्जन अपने साथियो को साथ लेकर गुरुजी के कमरे की ओर बढा। सब के सब तलवारे लिये अपने शिकार पर टूटने के लिये तैयार थे। वे अधेरे मे धीरे-धीरे बढने लगे।

जव वे गुरुजी के कमरे के बाहर पहुचे तो उनके कदम अपने आप रुक गये। अंदर से रबाब के साथ-साथ कीर्तन की ऐसी मधुर आवाज आ रही थी कि उनकी आत्मा पर मस्ती छाने लगी। एक अनजाना नशा, जिससे वह सबके सब झूमने लगे।

गुरुजी अपनी तंद्रा मे सूही राग गा रहे थे—

उज्जड कैहा चिलकणा घोटिभ कालडी मसु।
धोतिया जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु ॥१॥
सज्जण सेई नालि मै चल दिआ नालि चलन्नि।
जित्थे लेखा मंगीए तित्थे खडे दिसान्नि ॥१॥ रहाऊ
कोठे मंडिप माडिआ पासहु चितवी आहा।
ठीआ कमिन आवन्नी विच्चहु सखणी आहा ॥२॥
वगा बने कपडे तीरथ मझी वसन्नि।
घुटि घुटि जीआ खावणे बगे ना कही अन्नि ॥३॥
सिंमल रुख सरीरू मै मैजन देखि भुलन्नि।
सेफल कम्मि न आवनी ते गुण मै तनि हन्नि ॥४॥

(हे सज्जन कांसी का वर्तन ऊपर से कितना चमकता है, परन्तु जितनी बार उसे धोया जाये, उसमे से मैल ही मैल

गुरुजी ने हसते हुये सज्जन की ओर देखा।

"महात्मा जी ! भोजन खाइये और हमें सेवा का अवसर प्रदान कीजिये।"

गुरुजी ने कहा, "भाई सज्जन ! आज तो हमारा व्रत है।"

फिर मरदाने की ओर देखकर सज्जन ने कहा, "आप लीजिये !"

गुरुजी को यही डर था कि क्योकि मरदाना खाने के मामले में कमजोर है, इसलिये वह यह भूल न कर बैठे।

मगर उस समय मरदाने की अतरात्मा जाग उठी और वह कहने लगा, "गुरुजी के बिना तो मैं कभी भोजन ही नही करता।"

सारे ठगों के चेहरे उतर गये। उनका षडयन्त्र फेल हो चुका था। उनका शिकार हाथ से निकला जा रहा था। वह तो बहुत सारी आशाएँ लगाये बैठे थे। इसके लिये उन्होने भोजन पर भी पैसे खर्च किये, मगर अब ?...

सज्जन तो हारने वाला था ही नही। वह तो एक दांव के पश्चात् दूसरा दाव खेलना भली-भाति जानता था। उसने मन-ही-मन मे दूसरी स्कीम बना डाली थी। उसने गुरुजी से कहा, "चलिये, आप अदर चलकर विश्राम कीजिये। आपके बिस्तर बिछवा दिये गये है।"

"सज्जन जी ! हम लोग कहा बिस्तरों पर सोते हैं। हमे तो फर्श पर ही लेटना होता है। हम तो यही रात काट लेगे।"

सज्जन की दूसरी चाल भी असफल हो गई थी।

गुरुजी वही फर्श पर आसन लगाकर सो गये थे।

सज्जन दूसरे कमरे मे जाकर अपने साथियो के साथ सलाह करने लगा। वह यह तो जान गया था शिकार अच्छा है, माल भी बहुत अच्छा मिलेगा, मगर यह शिकार हाथो से निकला जा

मेरा जन्म धर्म की रक्षा के लिये हुआ है। सज्जन, आज से हम आशीर्वाद देते है। तुमने हमारे चरणो मे शरण मागी है। आगे से यदि तुमने अपना जीवन बदल दिया और अपने आपको ईश्वर के हवाले कर दिया, तो हम तुम्हे अपने हृदय में स्थान देंगे। आज के पश्चात् तुम यहां हमारी ओर से अमृत-प्रचार के लिये रहोगे।"

सज्जन ने गुरुजी के मुख से यह शब्द सुने तो उसकी आत्मा गद्गद् हो उठी। उसकी खुशी की कोई सीमा न रही। वह अपने आपको बड़ा भाग्यशाली समझने लगा। वह पाप के जीवन से मुक्त हो गया था। वह हृदय से गुरु का दास बन गया था।

उस दिन से सज्जन ठग लोगो को ईश्वर-भक्ति का अमृत पिलाने लगा। उसने जगतगुरु को अपना गुरु मान लिया।

निकलती है। बाहर से हवेली की कितनी भी मीनाकारी की जाये, परन्तु भीतर से यदि वह खोखली हो तो वह किस काम आएगी। बगुला नदी किनारे आखे मूदकर खड़ा हो गया है, परन्तु उसका काम तो कीड़ों-मकोड़ों को खाना ही है। सेमल का वृक्ष कितना ऊचा होता है, परन्तु उसका फल फीका और पत्ते निरर्थक होते है, उस वृक्ष की ऊचाई से किसी को क्या लाभ हो सकता है।)

जब सज्जन ठग ने गुरुजी के मुह से यह वाणी सुनी तो उसकी आत्मा जागृत हो उठी। उसे ज्ञान प्राप्त हो गया। वह अपने साथियो सहित गुरुजी के पावो में गिर पड़ा और रो-रोकर कहने लगा—

"आप तो कोई महान् संत है। मैं जन्म-जन्म का अपराधी हू। मैंने आज तक वहुत से बेगुनाह लोगो को लूटा है। मै पापी हू गुरु जी, पापी······मुझे क्षमा कीजिये, मुझे उपाय बताइये, जिससे मै अपने गुनाहो की क्षमा पा सकू। मेरे हृदय में आग जल रही है। यह आग कैसे शांत होगी—आप ही बताइये। मै अब आपकी शरण आ गया हूं। अब शरण पड़े की लाज रखो··· मेरे ईश्वर ?"

"सज्जन ! हौसले से काम लो। मुझे इस चीज की बडी खुशी है कि तुम्हे ज्ञान प्राप्त हो गया है। अब तुम सब बुरे कामो को छोड़कर ईश्वर भक्ति मे लग जाओ। तुम्हें क्षमा मिलने का एकमात्र मार्ग यही है। अपने साथियों को भी अच्छे मार्ग पर लगाओ। स्वयं भी ईश्वर का ध्यान करो। अपनी नेक कमाई से खाना खाओ। बुराई से दूर रहो··"

"गुरु जी मुझे आपके आशीर्वाद की जरूरत है।"

"मैं हर अच्छे व्यक्ति के साथ हू। हर बुरे का शत्रु हूं। मैं अज्ञानियो को ज्ञान देने और पाप के सर्वनाश के लिये आया हू।

दे दिया। गुरुजी मास नहीं खाते थे, मगर अब वह दान में मिला था। वह किसी भक्त की भावनाओं को ठुकराना नही चाहते थे।

मरदाने को मांस पकाने के लिये कहा गया। जब कुछ साधुओ ने एक साधू को तीर्थ-स्थान पर [मास खाते देखा तो वे इकठ्ठे होकर गुरुजी के पास आ गये और बोले—

"तुम्हे शर्म नहीं आती ! एक साधू होकर तीर्थ-स्थान पर मांस खा रहे हो ? कितने दु:ख की बात है !"

गुरुजी को जीवन भर कभी क्रोध आया नही। वह साधुओं को क्रोधित देख कर स्वय हंसते हुये बोले—

पहिला मासुहु निभआ, मांसु अंदर वासु।
जीउ पाई मासु मुह मिलिया, हडु चमु तनु मासु ॥
मुहु मासै का जीभ मासै की, मासै अंदरि मासु।
वडा हुआ बीआ हुआ, घटि लै आयू या मासु ॥

साधुओ ने गुरुजी की वाणी सुनी। इन बातो का उनके पास उत्तर भी क्या हो सकता था ? वे इतने ज्ञानी कहा थे जो गुरुजी के ज्ञान के आगे टिक पाते। वे केवल यही कहकर रह गये—

"यह कोई पथ-भ्रष्ट साधू है। यह नर्क मे गिरेगा। इसको ईश्वर कभी क्षमा नही करेगे। यह ईश्वर की पवित्र भूमि को अपवित्र कर रहा है।"

गुरुजी उनकी बाते सुनकर एक बार फिर हस दिये और कहने लगे। "अरे मूर्खो, ईश्वर की भूमि सारी की सारी पवित्र है। यह भूमि कभी अपवित्र नही होती। जब कभी कोई चीज अपवित्र होती है, वह है आदमी की आत्मा।"

वे लोग इतने विशाल ज्ञान की बात कहा समझ पाते ! उनका ज्ञान तो अभी बातो तक ही था।

झूठी रस्मों का खंडन

पहिला, मासुहु निभआ, मासै अदरि बासु।
जीउ पाइ मासु मुहि मिलिआ, हडु, चमु तमु मासु॥
मुहु मासै का जीभ, मासै की मासै अदरि सासु।
वडा होआ वीआ हिआ, धरि लै आइया मासु॥
(सलोक महल्ला—१)

मुलतान से गुरुजी ने बड़े-बडे तीर्थों की यात्रा की योजना बनाई। हर साधु के हृदय मे तीर्थ-यात्रा की तडप उठती है। गुरुजी भी उन्ही साधू-सन्तो मे वैठकर भक्ति-मार्ग सीखे थे, इसलिये उनका सोचना था और चलना था। रास्ते मे भक्ति का प्रेम-अमृत बाटते हुये वह कुरुक्षेत्र पहुचे।

कुरुक्षेत्र मे उस समय सूर्य-ग्रहण का स्नान चल रहा था। वहां हजारों नही लाखो यात्री इकट्ठे हो रहे थे, जिनमें बहुत से साधू-सन्यासी भी थे। ऐसे समय पर दानी पुरुषो की भी कमी नही रहती। गुरुजी की एक विशेषता यह भी थी कि उन्हे दान मे जो भी चीज खाने के लिये मिलती, वह उसे ठुकराते नही थे। वहा पर एक दानी ने उन्हे हिरण का मास खाने के लिये

सकता ?"

पडितो के चेहरे उतर गये। गुरुजी की इस बात का उत्तर उनके पास क्या हो सकता था। वह अपनी बात पर स्वय ही लज्जित होकर वहा से चल पडे और मन-ही-मन में गुरुजी को पागल कहने लगे।

गुरुजी भली-भाति जानते थे कि ये सब अज्ञानी लोग है। उनकी आत्मा अभी प्रकाश से खाली है। जब तक इनकी आत्मा में ज्ञान का प्रकाश नही होता, तब तक ये ऐसे अधेरे मे ठोकरे खाते रहेगे। गुरुजी ने हर स्थान पर ऐसी बेकार रसमो का खुलकर खडन किया है। जहां भी वह गये, हर बुरी वस्तु के विरोधी हो गये। हर बुराई को उन्होने बुराई कहा और भलाई को भलाई।

दिल्ली पहुंचे

गुरुजी कही अधिक समय तक ठहरते नही थे। उनका काम तो भक्ति-अमृत को अधिक-से-अधिक लोगो तक पहुचाना था। अब उनके मन मे इस आशा ने अगड़ाई ली। उस समय दिल्ली पर सिकदर लोधी का शासन था। जैसा कि पहले अध्याय में विस्तारपूर्वक बताया जा चुका है कि सिकदर लोधी एक बहुत ही जालिम और सगदिल बादशाह था। हिन्दू धर्म का वह सब से बडा शत्रु था। कोई भी हिन्दू धर्म का प्रचारक उसे नजर आ जाता, तो वह या तो उसे जेल में बद कर देता या कत्ल कर देता।

गुरुजी जब दिल्ली पहुचे तो जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, हर धर्मी व्यक्ति को पकडा अथवा कत्ल किया जा रहा था। गुरुजी को भी दिल्ली पहुचते ही बदी बना लिया गया और जेल भेज दिया गया। यहां हजारो साधू पहले ही जेल में कठोर दड

वहां से गुरुजी ने हरिद्वार जाने का रास्ता चुन लिया। वह गंगा-स्नान करना चाहते थे, इसलिये गंगा की ओर चल पड़े।

हरिद्वार में भी गुरुजी ने एक निराला आविष्कार दिखलाया। सुबह-ही-सुबह वह उठकर गगा स्नान के लिये गये। जब वह और मरदाना स्नान कर चुके तो उन्होने वहा के ब्राह्मणों और दूसरे कई लोगों को सूर्य की ओर मुह करके जल फेकते हुये देखा।

गुरुजी बहुत देर तक आश्चर्य से उनकी ओर देखते रहे। जब उनकी समझ में कुछ न आया तो अंत मे एक ब्राह्मण के पास जाकर पूछने लगे—

"पडित जी ! यह आप क्या कर रहे है ?"

"हम सूर्य को जल दे रहे है।"

गुरुजी हस दिये और स्वयं उलटी ओर को मुह करके जल देने लगे। जब ब्राह्मणो ने एक साधू की उलटी ओर मुह करके गगाजल फेकते हुये देखा तो वे गुरुजी के पास आकर पूछने लगे—

"साधू ! यह तुम क्या कर रहे हो ?"

"पडित जी, मैं अपने तडवडी वाले खेतो को पानी दे रहा हू।"

"अरे तुम पागल तो नही हो गये ? यहां से अपने खेतों को पानी दे रहे हो। भला यहा से इतनी दूर पानी कैसे जा सकता है ?"

"यदि मै पागल हू तो आप मुझसे भी बड़े पागल हैं।"

"वह कैसे ?" कई पडित क्रोध से बोले।

"वह ऐसे कि यदि तुम्हारा पानी यहा से लाखों-करोड़ों मील की दूरी पर सूर्य के पास पहुच सकता है तो क्या मेरा

बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि गुरु जी ने गिरते हुये हिन्दू-धर्म की दीवार को अपने कधो से रोकने का पूरा-पूरा यत्न किया और इसमें वह सफल भी रहे।

गुरुजी को कैदी बनाकर जब जेल में डाल दिया गया, तो वहां का दृश्य देखकर गुरुजी की आत्मा कांप उठी। साधुओ के ऊपर इतने जुल्म-अत्याचार को वह कोमल आत्मा कैसे सहन कर सकती थी। उनका अपराध भी क्या था, यही न कि वे अपने धर्म के पुजारी थे। धर्म-रक्षक थे। वह अपना धर्म छोड़ने के लिये तैयार न थे। इसी अपराध मे उनसे कठोर-से-कठोर काम लिये जाते। हटरो से मारा-पीटा जाता…वे धर्मी बन्दे इतनी मार खाकर भी अपना धर्म छोडने के लिये तैयार न होते।

इस अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध, गुरुजी ने अपनी कविता की तलवार उठाई। ससार के इतिहास मे यह बात नई तो नही मगर महत्वपूर्ण अवश्य है। जो काम लोहे की तलवारे न कर सकी, वह कवियों और साहित्यकारो की लेखनियो ने किये। नफरत को प्रेम से भी जीता जा सकता है। यह मार्ग गुरुजी ने हमे दिखाया। ससार पर यह बात सिद्ध कर दी कि धर्म-युद्ध धर्म-मार्ग से भी लडे जा सकते है।

जेल मे गुरुजी को भी पीसने के लिये चक्की दे दी गई। ब्रह्मज्ञानी, अपनी चक्की छोड़कर बैठ गये। चक्की अपने आप चलने लगी। उन्होने मरदाने से कहा, "तुम रबाब बजाओ, हम कविता-पाठ करेगे।"

मरदाना रबाब बजाने लगा। गुरु जी ईश्वर-भक्ति का पाठ करने लगे। जैसे-जैसे गुरु जी की आवाज जेल मे फैलती गई, जैसे-तैसे लोग अपने काम बन्द करके गुरु जी की ओर भागे हुये आने लगे। चक्की वालो ने चक्की चलानी बन्द कर दी। जो

भोग रहे थे। गुरुजी को भी बदी बनाकर इन्ही के साथ चक्की पीसने के लिये लगा दिया गया।

गुरुजी के इस भाति बदी बनाये जाने के बारे में इतिहास कारो में बहुत मतभेद है। कुछ लोगो का कथन है कि जब गुरुजी दिल्ली पहुचे तो सिकंदर लोधी के जासूसो ने बादशाह से जाकर कहा, "यहा एक अनोखा साधू आया है, जो वेदो को भी मानता है और मुस्लिम धर्म को भी। विरोध किसी का नही करता, मगर वह शक्ल से हिन्दू साधू ही लगता है। इससे पूरे शासन को खतरा पैदा हो सकता है। वह लोगों को सरकार के विरुद्ध भड़का रहा है। वह शासन को उलटने के यत्न कर रहा है।'

इस प्रकार से यह बात सिद्ध करने का यत्न किया गया है कि गुरुजी एक राजनैतिक बदी थे। उन्हें राजनीति के आधार पर बदी बनाया गया था। मगर कुछ इतिसासकार गुरुजी को राजनैतिक बदी बनाने के लिये तैयार नही होते। उनके कथनानुसार गुरजी राजनीति के बारे में बिल्कुल ही कोरे थे। वह एक धर्म-प्रचारक थे।

मगर एक बात, जो इन इतिहासकारों की ही बातो से स्पष्ट हो जाती है, वह यह है कि गुरुजी एक धर्म-प्रचारक होने के साथ-साथ राजनीतिक विचारधारा भी रखते थे। उन्होंने अपने धर्म को बचाने के लिये लोगो को एक झडे तले इकट्ठा करना आरंभ कर दिया था। यदि वह खुलेआम राज पलटने की बात नही करते थे तो क्या हुआ, वह लोगो के दिलों मे ज्ञान का प्रकाश भरकर भय को तो दूर करने का यत्न कर ही रहे थे, जिसे शात और धार्मिक राजनीति कहा जा सकता है।

हो सकता है कुछ इतिहासकार मेरी इस विचारधारा से सहमत भी न हो, मगर इस प्रमाण के लिये गुरजी के दूसरे अनुयाइयों के विचारो को सामने रखा जा सकता है। इससे यह

करता चला आ रहा था। मगर यह साधू कैसा था, जिसने अपने भजनो से उसके मन मे एक न समाप्त होने वाला युद्ध आरम्भ कर दिया। उसकी तलवार हाथो से गिर पडी थी। वह तो हार रहा था। महान योद्धा·· एक साधू के हाथों हार रहा था।

वह अपने स्थान पर खडा ही रह गया। गुरु जी ने उसकी ओर देखा भी नही।

"बन्द करो···उसकी आवाज कांपी।

गुरु जी हसे···जैसा कि उनका स्वभाव था। उन्होने अपने प्रकाश भरे नेत्रों को खोलकर देखा···

"आओ सिकंदर जी, आओ···हम तो आपका इन्तजार कर रहे थे। हम जानते थे, हमारा भक्ति-रस तुम्हें खीच लायेगा।"

"मगर तुम जानते नही हम सव काफिरो के दुश्मन है।"

"जानते है, तभी तो यहां आये है और आपको भी बुलवाया है। बादशाह सलामत क्या आप नही जानते कि यहां कोई काफिर और कोई मोमन नही। सभी एक ही खुदा के बन्दे है। सब एक ही मार्ग से आये हैं, सब एक ही मार्ग से जाएगे। धर्म अत्याचार से नही, प्रेम से जीवित रहता है। नफरत हर धर्म को बुरा बनाती है। सभी वन्दे उस अकाल पुरवे के हैं। वह सबका दाता है। मरने के पश्चात् हर एक से हिसाव लिया जायेगा। धर्म पर अत्याचार को न तो तुम्हारे हजरत मुहम्मद क्षमा करेंगे न कोई और देवता। इस्लाम ने हमे किसी धर्म पर अत्याचार के लिये नही कहा था। विश्व के सब धर्म एक है। जो काम हम प्रेम से कर सकते है, वह नफरत से नही।

"वुरा तो वुरा है। इसकी सजा तुम्हें तुम्हारे खुदा के घर अवश्य मिलेगी। जिस धर्म के लिये तुम इतने अत्याचार कर रहे हो, उस धर्म का कोई भी आदमी उस समय तुम्हारे साथ न होगा, जव तुमसे इस जन्म का हिसाव मांगा जायेगा। नर्क में

लोग इन साधुओं को हंटरों से पीट रहे थे, उनके हाथ अपने आप रुक गये। वे सब भी हाथ जोड़कर खड़े हो गये। पहरेदार अपना काम छोड़कर गुरु जी की सगत मे आ गये।

जेल का सारा वातावरण भक्ति-रस मे डूब गया। पापों के स्थान पर पूजा आरम्भ हो गई। जो इस पूजा के शत्रु थे, वही लोग पूजा-पाठ का आनन्द लेने लगे। कुछ पहरेदार भागे हुये बादशाह सिकन्दर लोधी के पास गये और कहने लगे कि जेल मे एक ऐसा साधू आया है जिसने सारी जेल को ही धार्मिक स्थान में बदल दिया है। वहां तो कविता-पाठ आरम्भ है।

सिकंदर लोधी की आखों में खून उतर आया। वह क्रोध के मारे कांपने लगा। बोला—

"यह कैसे हो सकता है ? तुमने उसे कत्ल क्यो नही किया ? ऐसे व्यक्ति के शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके कुत्तो के आगे क्यो नहीं डाले ?"

पहरेदार कुछ तो पहले ही डरे हुये थे, कुछ बादशाह का गुस्सा देखकर घबरा गये। वे डर के मारे चुप खड़े रहे।

"तुम चुप क्यो खडे हो ? यदि तुम्हारी तलवारों मे जग लग गया है, यदि तुम इतने ही बुजदिल हो गये हो, तो चलो इस काफिर को मै अपने हाथो से कत्ल करता हूं।" यह कहकर सिकंदर लोधी तलवार लेकर निकल पड़ा।

जब सिकंदर लोधी जेल मे पहुचा तो हरि कीर्तन हो रहा था। सब कैदी-पहरेदार हाथ जोडे थे। यह कैसा मन मोहने वाला दृश्य था, नफरत के स्थान पर प्रेम···ईश्वर-भक्ति की यह निराली लीला···

बादशाह के कदम वही द्वार पर रुक गये। वह क्या करने आया था, सामने क्या नजर आ रहा था। वह तो वर्षो से धर्म-प्रचारकों के खून से हाथ रंगता आ रहा था। धर्म का नाश

पटना और बनारस में

राजा बालकु नगरी काची दुसटा नाल्लि पिआरो
दुइ माई दुइ बापा पड़ी आहि करहु बीचारो

दिल्ली से गुरुजी बनारस की ओर चल पडे क्योंकि बनारस उस समय पण्डितो का गढ था, किसे काशी जी कहते थे। गंगा के तट पर बसा हुआ यह सुन्दर नगर इतिहास मे एक विशेष स्थान रखता है। यहां से लोग धर्म के बारे मे ज्ञान और संस्कृत विद्या प्राप्त करके निकलते है। गुरुजी के मन की यह इच्छा थी कि जहा से भी ज्ञान मिलता है, जिस स्थान पर भी ज्ञान का प्रकाश है, उस स्थान पर एक बार अवश्य जाएं।

इसी विचार को सामने रखते हुये वह बनारस पहुचे।

वहा पर एक विद्वान पण्डित चतुरदास ने जब एक निराले और अजनबी साधू को देखा तो पहले तो वह हैरान हुये, फिर उनके पास जाकर पूछने लगे—

"महात्मा, तुम कैसे साधू हो जिसके पास न माला है, न तुलसी की माला गले मे डाली है, न आपके पास शालग्राम है। आपकी मुक्ति कैसे होगी?"

हर बुरा आदमी गिरेगा। हर अच्छा आदमी स्वर्ग में जायेगा। यह शरीर मिट्टी है। आत्मा अमर है। इस आत्मा को ज्ञान की जरूरत है। ज्ञान के बिना आदमी अंधा है। ज्ञान ही गंगा है, ज्ञान ही स्वर्ग। अज्ञानता नर्क है। इस नर्क से बचना है तो अच्छे काम करो।"

सिकंदर लोधी के मन पर गुरु जी की बातों का बहुत प्रभाव पड़ा। वह गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा और अपनी भूल के लिये क्षमा मांगने लगा।

गुरु जी ने हंसकर कहा, "हमसे क्षमा न मांगो। इन सब साधुओं को छोड़ दो, आजाद कर दो, यही तुम्हें क्षमा देंगे..."

उसी समय सब साधुओं को छोड़ दिया गया और गुरु जी को भी आदर के साथ जेल से बाहर निकाला गया।

दिल्ली में गुरु जी की याद में एक गुरुद्वारा मजनू टीला पर बना हुआ है। यहां आप रहे थे। दूसरा जी. टी. रोड पर गुरु नानक प्याऊ के नाम से है।

परन्तु फिर भी वह बह नहीं जाती। सूर्य और चन्द्र एक ही आकाश में रहते है, परन्तु दोनों के गुण अलग-अलग है। इसलिये मनुष्य आशा-तृष्णा के बीच मे रहता हुआ भी इनसे निर्लिप्त रह सकता है।"

"ब्रह्मज्ञानी के क्या लक्षण है?" पडित जी फिर प्रश्न किया।

"जो ईश्वर को सर्वव्यापक समझता है और चारो ओर से घेरने वाली माया को काट देता है, वह ब्रह्मज्ञान है। उसका लक्षण यह है कि वह सदा क्षमा धन का सग्रह करता है।"

"क्या मेरी अपार विद्या परम सत्य के साक्षात्कार में कुछ सहायक होगी?" पण्डित जी ने प्रश्न किया।

इसके उत्तर में गुरु जी ने चौवन छद कहे और इस बात को दुहराया कि देवता, सृष्टि, मानव, मन, बुद्धि, पुण्य और पाप —सभी कुछ ईश्वर से प्राप्त होता है। इसलिये किसी अन्य का ही सहारा क्यो लिया जाये। मनुष्य को सदा राम नाम की ही चिन्ता करनी चाहिये।

"फिर ईश्वर-प्राप्ति कैसे हो?"

"केवल एक मार्ग है। प्रेम···जो ईश्वर से प्रेम करता है, उसमें द्वेष-भाव नही होता। वह सभी को एक समान समझता है। यह माया उसे नही मोहती। वह अपने मे सन्तुष्ट रहता है।"

पण्डित चतुरदास जी गुरु जी की ज्ञान भरी वाते सुनकर उनके शिष्य बन गये और गुरु जी से ज्ञान प्राप्त करते रहे।

जो वाते पण्डित चतुरदास के साथ हुई थी, वे गुरु जी ने वाद मे एक वाणी के रूप मे सग्रह की, जिसका नाम 'दक्षिणी आकार' रखा गया। जिस स्थान पर पण्डित जी से वातचीत हुई, उस स्थान पर अव एक गुरुद्वारा है जिसका नाम 'गुरु का वाग' है।

गुरुजी हसे, और कहने लगे—

"हे ब्राह्मण ! तुम ईश्वर को शालिग्राम वनाओ, शुभ कर्मों को तुलसी को माला समझो, रामनाम की पूजा का बीड़ा उठाओ, तभी दयालु ईश्वर की दया होगी।"

उन्होंने फिर कहा—

"हे साधक ! सेवा वृत्ति में लगे हाथों को कुए के अरहर के पात्रों की माला वनाओ। उसके साथ मन को वैल बनाकर जोत दो। फिर अमृत से अपने जीवन की क्यारी को सीचो, तभी तुम ईश्वर रूपी माला के प्रिय वन सकोगे।"

ब्राह्मण ने फिर कहा, "आप जो कहते हैं ठीक हो मकता है, परन्तु काम-क्रोध-लोभ-मोह से भरे मन पर कैसे विजय पाई जा सकती है ?"

"ब्राह्मण देवता ! काम-क्रोध-लोभ-मोह-अहकार को तुम लोग खुरपे दो और इनसे अपने मन-मन्दिर की धरती में गुड़ाई करो। जैसे-जैसे इसकी गुड़ाई होगी, वैसे-वैसे यह धरती उपजाऊ होगी। इसमे भक्ति-रस का ज्ञान निकलेगा।"

"हे साधू ! क्या शास्त्रो और वेदो के अध्ययन के बिना ज्ञान प्राप्त हो सकता है ?"

"ब्राह्मण देवता, केवल वेद-शास्त्र पढ़ने से प्रभु नही मिल सकता है। वह वेदों-शास्त्रो में नहीं, आपकी आत्मा के अन्दर है। यदि तुम्हारी आत्मा पर अंधकार छाया हुआ है तो ज्ञान का प्रकाश कहां से आयेगा ? यह ज्ञानरूपी प्रकाश मनुष्य की आत्मा से पैदा होता है। पुस्तकें पढ़ने से नहीं।"

"यदि यह बात सत्य है तो मनुष्य को मुक्ति की क्या आशा है ?"

गुरु जी हसे और बोले, "क्या आप नही जानते कि प्रफुल्लित वनस्पति मे भी अग्नि होती है। धरती सागर से घिरी रहती है,

परन्तु फिर भी वह बह नहीं जाती। सूर्य और चन्द्र एक ही आकाश में रहते है, परन्तु दोनो के गुण अलग-अलग है। इसलिये मनुष्य आशा-तृष्णा के बीच मे रहता हुआ भी इनसे निर्लिप्त रह सकता है।"

"ब्रह्मज्ञानी के क्या लक्षण है ?" पडित जो फिर प्रश्न किया।

"जो ईश्वर को सर्वव्यापक समझता है और चारों ओर से घेरने वाली माया को काट देता है, वह ब्रह्मज्ञान है। उसका लक्षण यह है कि वह सदा क्षमा धन का संग्रह करता है।"

"क्या मेरी अपार विद्या परम सत्य के साक्षात्कार मे कुछ सहायक होगी ?" पण्डित जी ने प्रश्न किया।

इसके उत्तर में गुरु जी ने चौवन छद कहे और इस बात को दुहराया कि देवता, सृष्टि, मानव, मन, बुद्धि, पुण्य और पाप —सभी कुछ ईश्वर से प्राप्त होता है। इसलिये किसी अन्य का ही सहारा क्यो लिया जाये। मनुष्य को सदा राम नाम की ही चिन्ता करनी चाहिये।

"फिर ईश्वर-प्राप्ति कैसे हो ?"

"केवल एक मार्ग है। प्रेम...जो ईश्वर से प्रेम करता है, उसमें द्वेष-भाव नही होता। वह सभी को एक समान समझता है। यह माया उसे नही मोहती। वह अपने में सन्तुष्ट रहता है।"

पण्डित चतुरदास जी गुरु जी की ज्ञान भरी बातें सुनकर उनके शिष्य बन गये और गुरु जी से ज्ञान प्राप्त करते रहे।

जो बाते पण्डित चतुरदास के साथ हुई थीं, वे गुरु जी ने बाद में एक वाणी के रूप मे सग्रह कीं, जिसका नाम 'दक्षिणी आकार' रखा गया। जिस स्थान पर पण्डित जी से बातचीत हुई, उस स्थान पर अब एक गुरुद्वारा है जिसका नाम 'गुरु का बाग' है।

गया जी की ओर

गुरु जी किसी स्थान पर टिकते नहीं थे। वह तो ज्ञान दीप को हाथों पर उठाये हर स्थान पर प्रकाश करते जा रहे थे। जहाँ जाते, उनके सैकड़ो चेले बन जाते। ज्ञान का दीपक वह वहा जलाकर स्वयं आगे बढ़ जाते।

वहां से वह महात्मा गौतम के तीर्थ-स्थान की ओर बढे। यहां से उन्होंने सारे संसार को शान्ति का सदेश दिया था। वह भी शान्ति और ज्ञान के पुजारी थे। यह स्थान बिहार में फल्गू नदी के तट पर है। यहा पर आकर लोग अपने पितरो की गति के लिये पिड देते है।

गुरु जी की अनोखी वेष-भूषा देखकर वहां के सब पडे हैरान हुये—यह विचित्र साधू कहा से आ गया ? उनके विचार मे यहा जो भी आता है, वह अपने पितरो के पिड भरवाता है ताकि उनकी मुक्ति हो जाये, मगर गुरु जी तो वहा जाकर अपने भक्ति-संसार में मग्न हो गये।

जब वहां के पडों ने यह देखा कि गुरु जी कोई पिंड वगैरह नही भरवा रहे है, तो उन्होंने गुरु जी से पूछा, "आप किस धर्म से सम्वध रखते है ? यदि आप हिंदू है तो अपने पूर्वजों के पिड भरवाइये ओर यदि हिंदू नही है तो इस तीर्थ मे क्या करने आये है ?"

गुरु जी ने उन्हें उत्तर दिया, "भाई, मै न हिंदू हू, न मुसलमान। मै तो ईश्वर का भेजा हुआ एक इन्सान हू और मेरे विचार में यहा जो भी आता है, वह एक मनुष्य ही होता है। धर्म के बारे में उसे कोई पता नही होता कि वह क्या है। दुनिया में एक ही धर्म है—वह है मानवता का धर्म। इससे बड़ा धर्म कोई नही। पापी का कोई धर्म नही, धर्मी स्वय धर्म का पुजारी है।"

"आप कहना क्या चाहते है ?" एक पडे ने जलकर पूछा ।

"मैं जो कहना चाहता हूं वह सीधी-सी बात है । यह ससार है । इस सारे ससार का एक ही स्वामी है, वह है ईश्वर, जिसने हमें जन्म दिया । सच्चा पुरुष बुराइयो से दूर रहता है । जो आदमी बुराई से दूर रहे, ईश्वर उससे प्यार करता है । वही वास्तव में ईश्वर का भक्त है । आप जो यहां सबसे पिंड लेते है, और लोगों को यह कहते है अपने पूर्वजनो के पिंड दान करो—यह सब पिंड यहीं पर रह जायेगे । कोई आगे किसी पूर्वजो के यहा जाने वाला नही । क्या तुम समझते हो कि हमारे पूर्वज इन पिडों की प्रतीक्षा मे बैठे होगे ? यह हमारा शरीर यही पर रह जाता है । आत्मा शरीर बदलती है । वह आत्मा, जिसे भूख-प्यास लगती ही नही । वह सब चीजो से मुक्त है, फिर हम उसकी चिंता क्यों करे ?"

गुरु जी की इन बातो का असर वहा के लोगो पर बहुत हुआ । सब लोग गुरु जी के सामने हाथ जोडकर खडे हो गये । आज से पूर्व किसी ने खुलकर इन रस्मो का खण्डन नही किया था । ये पडे लोगो को डरा-डराकर उन्हे जबर्दस्ती दान के लिये विवश करते थे ।

गुरु जी की ज्ञान-भरी बातो से लोगो की आत्मा से अधेरा छटने लगा । उन्हे एक प्रकाश नजर आने लगा । वह प्रकाश ज्ञान का था । कई दिन तक लोग गुरु जी से ज्ञान की बाते सुनते रहे । गुरु जी और मरदाना—दोनो मिलकर लोगो को इस जीवन के विषय मे ज्ञान देते रहे । यहा पर हजारो लोग गुरु जी के पुजारी बन गये थे ।

अब गुरु जी यहा से पटना की ओर चल पडे । उस समय यह सड़के वगैरह नही थी अतः सारा सफर जगल के मार्ग से ही करना पड़ता था । इस रास्ते मे गुरु जी को डाकुओ ने घेर

लिया। गुरुजी का चमकता चेहरा देखकर उन्होंने अंदाज लगा लिया कि इनके पास बहुत धन होगा, इसलिये सारे के सारे डाकू गुरु जी को घेरकर खडे हो गये।

गुरु जी ने जब देखा कि अब बचाव का कोई रास्ता नहीं रहा और ये डाकू उनसे धन की आशा रखते है। इस धन के लोभ मे उन्हे कत्ल करने का भी इरादा कर चुके है, तब उन्होंने उनके सरदार को अपने पास बुलाया और उससे कहा—

"सुनो भाई! यह धन-दौलत तुम्हारे साथ नहीं जायेगा, जिसके लिये तुम लोगो का खून बहाते हो। यह तुम्हारा साथी नहीं है। यह सब कुछ यही पर रह जायेगा। सच्चा साथी केवल ईश्वर-भक्ति है, जिसे करके तुम सीधे स्वर्ग में जाओगे। बुरे कर्मों वाले नर्क की आग मे जलते है। उस आग में हमारा साथ कौन देगा? इन पापो को त्यागकर भजन की ओर ध्यान दो, पुरुषार्थ करो ताकि तुम्हारा कल्याण हो···यह मानस-जन्म फिर नही मिलेगा।"

गुरु जी की आवाज तो सीधी ईश्वर की आवाज थी। उनका जन्म इस ससार से बुराई को समाप्त करने के लिये हुआ था। चोर-डाकू अथवा पाखण्डी लोग कोई भी हो—उनके ज्ञान को पाकर मुक्ति पाते थे। जैसे ही इन चोरों ने गुरु जी के मुख से ये ज्ञान-भरे शब्द सुने, तो वे सारे के सारे गुरु जी के आगे हाथ जोड़कर खडे हो गये और उनसे क्षमा मांगने लगे। वह सब के सब गुरु जी के पुजारी बन गये थे।

अब गुरु जी पटना पहुच गये। पटना, जो गंगा के किनारे बसा हुआ है, उस समय का ऐतिहासिक तीर्थ था। यहां धर्म प्रचार करने के बाद गुरु जी कामरूप (आसाम) की ओर चले गये।

गुरु जी ने आसाम के कई शहरों का भ्रमण किया।

अब गुरु जी का साथी मरदाना थक चुका था। उसने कहा, "गुरु जी, अब बहुत थक गया हूं। चलो, वापस अपने देश की ओर चले। वहां से फिर वापस आ जाएगे।"

गुरु जी ने जब मरदाने की आखों में उदासी की लकीरें देखी, तो इन्कार न कर सके और वापसी का प्रोग्राम बना लिया।

वापस पंजाब में

मरदानिया छेड रबाब, बाणी आईए

अब गुरु जी अपनी लम्बी यात्रा को समाप्त करके फिर वापस अपने देश की ओर आ गये। इस लम्बी यात्रा मे गुरु जी ने लाखों को भक्ति-दान दिया, हजारो अज्ञानियों को ज्ञान-मार्ग बताया। यह यात्रा गुरु जी के जीवन मे बहुत महत्व रखती है। इस यात्रा में गुरु जी ने बहुत कुछ देखा, बहुत कुछ लोगो को सिखाया।

पजाब मे सबसे पहले वह लाहौर में आकर रुके। यहां आकर लोगों को प्रेम और धर्म का मार्ग बताया और भक्ति के लिये प्रेरणा दी। यहा से वह सैदपुर तलवडी और करतार गये।

भाई लालो के घर में

भाई लालो ने जब गुरु जी को देखा तो उसके मुखड़े पर खुशी की लहर दौड़ गई। वह गुरु जी के चरणों मे गिर गया। गुरु जी ने लालो को उठाकर अपने सीने से लगाया और जी भरकर प्यार किया। भाई लालो ने गुरु जी को वह दुःख बताये,

जो उनके जाने के पश्चात् उन सबने सहन किये थे।

लाली रो भी रहा था और एक-एक करके उस अत्याचार की कहानी सुना रहा था, जो पठानो ने उन पर ढाये थे। विशेष-कर बाबर के जुल्मो की दर्द-भरी कहानी सुनकर गुरु जी भी अपने आंसू न रोक सके। उन्होने आखे भरते हुये कहा।

"भाई लाली, इन देशवासियों का भाग्य खराब है। इस देश पर अभी और दु.खो के पहाड़ टूटने वाले है। यह दु:ख जो तुमने बताये हैं, यह बहुत बडे और बुरे है, मगर मुझे ऐसे लगता है कि इससे बडे दु:ख हमे अभी और देखने होगे। हजारो निर्दोषो की जाने जाएगी। सैकड़ो बेगुनाहो को इस दमन की चक्की मे पीसा जायेगा।

"गुरु जी क्या इसका कोई उपाय नही है?"

"भाई लाली! यह तो ईश्वर की आज्ञा है। हम धरती के प्राणी इस विषय मे कुछ भी तो नही कर सकते। अब वही हमारी रक्षा करेगा। हमारा जो भी कर्त्तव्य है, हम उसका पालन कर रहे है।" इसके पश्चात् गुरु जी ने मरदाने से कहा, "मरदानिया, छेड़ रबाब, बाणी आईए!" इसके पश्चात् गुरु जी ने अपने नेत्र बन्द किये और तरग मे गाने लगे —

जैसी मै आवे खसम की बाणी, तैसडाकरी ज्ञानु वेलालो।
पाप की जज लै काबलाहु छाया जोरी मगै दानु वेलाली॥
सरमु धर्मु दुए छपै खलोये कूडै फिरे प्रधान वेलाली
काजिया बामणा की गल थकी अगद पडै सैतानु वेलाली
मुसलमानिया पडहे कतेबा कसर महि करहे खुदा वेलाली
जाति सनाती होरे हिदवाविया एहे भी लेवै लाई वेलाली
खून के सोहिले गवाहिया नानक रतु का कुमू पाये वेलाली

गुरु जी की दु.ख-भरी वाणी सुनकर पास खड़े सब लोग रोने लगे। एक ब्राह्मण ने कुछ फल गुरु जी के आगे रखे और रोते

हुये कहने लगा, "हे ज्योतिस्वरूप, दु:खियों के साथी, हमारा कल्याण करो। सारा देश इस समय आपकी ओर देख रहा है।"

"ईश्वर से प्रार्थना करो। इस समय वही हम सबका साथी है। वही हमारा कल्याण करेगा।"

यह शब्द कहकर गुरु जी चुप हो गये।

वहां से गुरु जी एक बार फिर अपने गाव तलवंडी की ओर चल पड़े। गाव मे जाकर बाहर ही एक कुटिया मे बैठ गये। घर को तो जैसे वह सदा के लिये तिलाजलि दे चुके थे। शाम के समय जब मरदाना गाव मे घूमने गया, तो गुरु जी को माताजी ने उसे देखकर पहचान लिया और पकडकर पूछने लगी—

"हे मरदाने, बता मेरा बेटा कहा है और तुम दोनों कहां-कहां घूमकर आ रहे हो?"

मरदाने ने माता जी को सक्षेप में अपने सफर की सारी कहानी सुनाई। माता जी जैसे-जैसे बाते सुनती गई तैसे-तैसे उनकी आखो मे आसू आते गये। उनका पुत्र तो अब पूर्ण साधू और सत बन चुका था। उसका जीवन अब पूरे देश का जीवन बन गया था। वह ही अब इस दुखी कौम का आखिरी सहारा था।

गुरु जी के माता-पिता दोनो अपने बिछडे पुत्र को देखने के लिये आये।

गुरु जी ने माता-पिता दोनों के चरणों को छुआ और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया। घर जाने का अब प्रश्न ही नही उठता था। वह अपने पुत्र की हालत देखकर सब कुछ समझ गये थे।

चैन कहां

कुछ दिन ही तलवंडी मे ठहरने के पश्चात् गुरु जी ने फिर यात्रा की तैयारी कर ली। अब की बार गुरु जी दक्षिण के प्राचीन धार्मिक स्थानो की यात्रा करना चाहते थे। जिन जगलो मे श्री राम ने अपना बहुत-सा समय व्यतीत किया था, जहां-जहा महा-पुरुषो के कदम पडे थे, उस धरती को देखने की आशा गुरु जी के हृदय मे अंगड़ाइया ले रही थी।

रास्ते मे हर स्थान पर गुरु जी रुकते और लोगो मे ईश्वर नाम का प्रचार करते। चलते-चलते वह पचवटी, रामेश्वरम के मन्दिरो से होते हुये श्री लका तक गये। यह वही लंका थी जहां के राक्षस राज्य को समाप्त करके श्री राम ने धर्म का राज्य स्थापित किया था।

इतिहासकारो के कथनानुसार उस समय वहा का राजा बहुत धर्मी और दयावान था। सारे देश में धर्म-प्रचार हो रहा था। साधु-ब्राह्मण का बहुत आदर-मान किया जाता था। जब गुरु जी वहां पहुचे तो वहा के राजा ने अपने नौकरो को भेजकर उन्हे अपने दरबार मे बुलवाया। गुरु जी मरदाने को साथ लेकर

राजदरबार में पहुंचे।

राजा ने स्वय उठकर गुरु जी का स्वागत किया। गुरु जी राजा का यह अच्छा व्यवहार देखकर बहुत ही खुश हुये। राजा को आशीर्वाद देते हुये बोले—"धर्म की जय हो। आप सदा प्रसन्न रहें।"

फिर गुरु जी ने राजा के कहने पर सबको गुरवाणी का प्रेम-अमृत पिलाया। वहा के लोग बहुत खुश हुये और चारों ओर गुरु जी की जय-जयकार होने लगी।

कुछ दिन वहा रुकने के पश्चात् गुरु जी वापस चल पड़े।

कजली वन के सिद्ध और भरतरी हरि से भेंट

गुरु जी जब वहा से वापस आए तो रास्ते में बीजापुर के कोई सौ मील फासले पर कजली वन के सिद्धो का डेरा था। ये लोग इस दुनिया को त्याग चुके थे। बस वहां बैठकर नशे की चीजो का प्रयोग करते और राम-नाम का स्मरण करके सो रहते। इन सिद्धों ने जब अनोखी वाणी वाले एक साधू को जंगल मे आते देखा तो पहले तो गुरु जी की शक्ल देखकर हैरान हुये फिर इनके पास आकर पूछने लगे—

"हे सन्त, तुम कौन हो? कहा से आये हो? तुम्हारा नाम क्या है?"

गुरु जी तो चुप रहे, मरदाना बोला—

"यह जगत गुरु नानक देव जी हैं। इनका कोई देश नही। हर स्थान पर इनका घर है। यह महान योगी है। यह ईश्वर-भक्ति का अमृत बाटने के लिये जगह-जगह घूम रहे है।"

इसके पश्चात् गुरु जी ने गुरवाणी का पाठ आरम्भ किया।

सारे सिद्ध गुरुवाणी सुनकर बडे खुश हुये। उन्होंने कहा, "महाराज! आप एक और योगी भरतरी हरि से मिलिये।"

गुरु जी भरतरी हरि से मिलने पहुंचे। वह दुनिया को ठुकरा-कर एक कुटिया में पड़े थे। गुरु जी को अपने सामने देखकर वह बहुत खुश हुये, और बोले—

"मेरी आत्मा कहती थी कि एक दिन महान व्यक्ति मेरा कल्याण करने के लिये अवश्य आयेगा।" वह देर तक आपस मे वचन-विलास करते रहे। भरतरी हरि शराब बहुत पीते थे।

गुरु जी ने उन्हें समझाया, "इस शराब से क्या लाभ है, असली नशा तो ईश्वर-भक्ति मे है।

नाम खुमारी नानका चढी रहे दिन रात

"ईश्वर का नाम ही एक ऐसा नशा है जो दिन-रात चढा रहता है। यह नशा कभी समाप्त नही होता है। ईश्वर महान है। उसकी पूजा करने वाले उससे भी महान होते है। इसलिये भरतरी जी, इस बनावटी नशे को छोडकर ईश्वर नाम का अमृत पीओ, जो तुम्हे भी अमर कर देगा और लोगों का जीवन भी सुधरेगा।"

भरतरी पर गुरु जी की बातो का बहुत असर हुआ, वह गुरु जी से गुरुवाणी का पाठ सुनते रहे। सारे सिद्ध गुरु जी से वास्तव-ज्ञान प्राप्त कर चुके थे। गुरु जी भी अपने [illegible] को देखकर खुश हुये।

गोरखमत नानकमत के बीच

इस लम्बी यात्रा के पश्चात् [illegible] गुरु जी एक बार पंजाब आये, कुछ दिन करतार में [illegible] करने के पश्चात् वह फिर सफर के लिये चल पड़े। यहां से वह [illegible] पीलीभीत गये। [illegible] के करीब जंगल में गोरखनाथ के सिद्धों का बहुत बड़ा डेरा था। क्योंकि गुरु जी को शुरू से ही साधुओं-संतों की संगत का [illegible] शौक था, [illegible] गुरु गोरखनाथ के लिये [illegible]

श्रद्धा थी, इसलिये वह इन गोरख-मत के सिद्धों से वचन-विलास करने चल पड़े।

गोरखमत के सिद्धो के डेरे में पहुंचकर जब गुरु जी ने अपनी वाणी सुनाई तो उन्होने गुरु जी से कहा कि आप लोग भी हमारे साथ रहें। आप ज्ञानी है, हमे ऐसे ज्ञानियो की जरूरत है।

गुरु जी ने उन्हे उत्तर दिया—

"तुम लोग इस जगल मे क्यो पडे हो, जबकि तुम्हे भली-भाति पता है कि हमारा पूरे का पूरा हिन्दू धर्म खतरे मे है। ऐसे समय मे जगल मे आकर छुप जाना कोई बुद्धिमत्ता नही और न ही यह कोई ज्ञान की बात है। तुम लोग सब बहादुर हो। गोरख जी के पुजारी हो। तुम्हे तो धर्म-रक्षा के लिए मैदान मे कूदना चाहिए। यहा इस तरह बैठने का क्या लाभ है।

इन सिद्धो ने गुरु जी को बातो को बडे ध्यान से सुना, मगर वह इस डेरे से बाहर जाने के लिये तैयार न हुये···वैसे गुरु जी के सामने वह उनके पुजारी बन चुके थे, उनकी विचारधारा पर उन्हें पूरा विश्वास हो गया।

कश्मीर में

जैसा कि गुरु जी अपने जीवन के आरम्भिक काल से हर तीर्थ-स्थान पर जाने के इच्छुक थे, उन्होने अपना जीवन ईश्वर को अर्पण कर दिया था। इसलिए अब वह देवताओ की धरती कश्मीर को भी देखना चाहते थे। यहां शिवजी ने ईश्वर-भक्ति करके सारे ससार के लिये एक नया मार्ग खोल दिया था। वह सब भक्तो के महान् भक्त थे। फिर इस धरती पर उस समय पंडितों का राज्य था। गुरु जी ब्राह्मणो की सगत से बहुत खुश होते थे। उनसे वचन-विलास करने मे बड़ा आनन्द आता था।

इसी विचार को लेकर वह मरदाने को साथ ले कश्मीर की

ओर चल पड़े, पहाड़ी और कठिन रास्तो से गुजरते हुये वह श्रीनगर गये। यहां पर रहकर कुछ दिन तक ब्राह्मणों के साथ वचन-विलास किये और उन्हें ईश्वर-भक्ति का नवीन मार्ग बताया। कश्मीर के पडित गुरु जी के विचारो से बहुत प्रभावित हुये और वह गुरु जी को वहां से आने नही दे रहे थे। मगर गुरु जी रुकते कहा थे। उनका आना-जाना ईश्वर के बस मे था। जैसे उन्हे अकाल की आज्ञा होती, वैसे ही वह करते…ईश्वर नाम को उन्होने बहुत दूर-दूर तक फैलाना था।

चीन, लद्दाख, तिब्बत में

अपने देश की यात्राएं सफलतापूर्वक समाप्त करने के पश्चात् गुरु जी विदेश यात्रा के लिये निकले। सिक्कम, भूटान के रास्ते वह चीन गये। यहा इससे पूर्व भारत के एक महान् पुरुष, महान् आत्मा, बुद्ध ने धर्म का प्रचार आरम्भ किया। महात्मा बुद्ध के पश्चात् यह दूसरी महान् आत्मा थी, जो धर्म-प्रचार के लिये चीन गई।

चीन के लोगो मे भक्ति-रस का काफी प्रचार था। भारत-वासियो की भांति वह भी धर्म के बारे मे कई धर्मो पर विश्वास रखते थे। हजारो देवी-देवताओं को पूजते थे। गुरु जी ने वहां जाकर उन लोगो को बताया, "ईश्वर केवल एक है, जो तुम्हारी आत्मा के अन्दर विराजमान है। उसी का नाम लेना हर-एक व्यक्ति के लिये जरूरी है, इससे तुम्हारा कल्याण होगा। किसी भी प्राणी का हृदय मत दुखाओ, बुराइयो से दूर रहो…"

चीन की यात्रा पूर्ण करने के पश्चात् वह कुछ दिनो तक तिब्बत में धर्म-प्रचार करते रहे। वहां से चलकर वह लद्दाख पहुचे।

लद्दाखी लामाओ के साथ गुरु जी ने बहुत अच्छा समय व्यतीत किया। उन लोगों को ज्ञान दिया। गुरु जी की रस-भरी वाणी मरदाने के रबाब पर सुनकर लद्दाखी लोग झूमते, और हरि नाम का कीर्तन करते। यहा भी गुरु जी के हजारों पुजारी बन गये थे।

यहां से गुरु जी शिमला की पहाड़ियों से होते हुये फिर व॰ की ओर चले। गुरु जी की यात्रा काफी लम्बी थी।

अरब देशों की यात्रा पर

सचहु ओरै सगुरु की उपरि सच अचारो

धन्य थे हमारे यह गुरु ! इनकी हर बात महान् थी । थकावट नाम की कोई चीज इनको छू तक नही गई थी । इतनी लम्बी-लम्बी यात्राए करने के पश्चात् भी उनके साहस मे कोई अन्तर नही आया था, कुछ दिन करतारपुर में विश्राम करने के पश्चात् उनके हृदय मे भक्ति-प्रचार की एक नई लहर उठी । उनकी आत्मा ने उन्हे आवाज दी, 'उठो नानक, अभी तुम्हारा कार्य पूरा नही हुआ। अभी कुछ और लोग तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं !'

'सवत १५७५ मे गुरु जी ने अपनी अरब देशो की यात्रा आरम्भ की। उन दिनो हाजी लोग सूरत के वन्दरगाह से ही मक्का मदीना की यात्रा के लिये जाया करते थे । भाई मरदाना आपके साथ था। गुरु जी के वस्त्र उस समय के हाजियों वाले थे, नीले कपडे, एक वगल में वस्ता जिसमे गुरु जी ने अपनी वाणी का सग्रह लपेट रखा था, जैसे हाजी लोग कुरान-शरीफ लपेट कर रखते है, दूसरे हाथ मे लम्बा डडा, जिसे हाजी लोग

'ईसा' कहते थे ; दूसरा आर ... जिसे हाजी लोग 'मसल्ला' कहते थे, जिस पर बैठकर पूजा की जाती है। सिद्ध के बीच मे होते हुए वह सूरत पहुंचे, यहां से पानी वाले जहाज पर चढ़-कर अरब देशो की ओर चल पड़े।

सागर तट से मक्का तक पैदल चलते-चलते गुरु जी मरु-स्थल की यात्रा मे काफी थक गये थे। मरदाने को कहा कि अब तुम सो जाओ। सारे हाजी उनके आस-पास लेटे हुये थे।

मक्का घूमा

गुरु जी तो अन्तर्यामी थे। हर पाखड के वह विरुद्ध थे। उन्होंने कुरुक्षेत्र और हरिद्वार के पंडों के पाखंडों का खुलकर खंडन किया। उनको बताया यह सब ईश्वर भक्ति के मार्ग में बाधा है। इन सबको भूल जाओ और सच्चे हृदय से ईश्वर की भक्ति करो।

रात को जब गुरु जी ठंडी-ठडी रेत पर सो रहे थे। उनके पांव मक्का की ओर थे, जिसे "काबा" कहा जाता है। मुसल-मान धर्म मे यह सबसे बड़ा अपराध गिना जाता है। मक्का शरीफ खुदा का घर है। मुसलमान हाजियो ने जब एक फकीर को मक्के की ओर पांव किये लेटे देखा तो वह क्रोध के मारे जल उठे, और सब उठकर गुरु जी के पास आये।

गुरु जी तो आराम की नीद सो रहे थे। उन्हें क्या पता था कि लोग उनके बारे मे क्या-क्या सोच रहे है।

हाजी लोग, क्रोध से भरे खड़े थे। उनके वश में होता तो गुरु जी को मार देते, मगर गुरु जी इस ससार के मानव कहा थे। वह तो ईश्वर-भक्त थे। उनके चेहरे से आत्म-प्रकाश छलक रहा था।

इन हाजियों में सबसे अधिक क्रोधी जीवन नामी हाजी था।

वह क्रोध से भरा हुआ गुरु के पास आया और पांव की ठोकर मार कर बोला।

"तू कौन है काफिर ! जो खुदा के घर की ओर पाव करके लेटा हुआ है। उठ यहां से..."

गुरु जी को तो कभी क्रोध आया ही नहीं था। उन्होने अपनी प्रकाश भरी नजरे खोली और धीरे से मुस्कराये, और बोले—

"क्या बात है भाई ?"

"अरे काफिर, तुम्हें नजर नही आता, खुदा के घर की ओर पांव करके लेटा हुआ है ?"

"भाई, गुस्से क्यों होते हो ? मै तो एक अनजान-सा फकीर हूं। मुझे तो पता नही खुदा का घर किस ओर है। फिर मै वहुत थका हुआ हू। तुम यदि चाहते हो कि मैं इस ओर पाव न करूं तो उठाकर दूसरी ओर कर दो, जिस ओर खुदा का घर नही है।"

जीवन हाजी क्रोध से भरा हुआ था ही, उसने बड़ी नफरत से गुरु जी के पाव को उठाकर दूसरी ओर कर दिया।

मगर हजारों हाजियो ने वहा एक निराला चमत्कार देखा, जो आज तक किसी ने न तो सोचा और न हो सकता है।

जीवन हाजी ने जिस ओर गुरुजी के पांव किये थे उसी ओर मक्का घूम गया था।

जीवन ने समझा शायद यह मेरी भूल है, मैने पांव घुमाये नही होगे। उसने एक वार फिर पांव घुमा दिये, मगर खुदा का घर फिर उसी ओर घूम गया।

अव क्या था ! हाजी लोग तो खड़े-खड़े बुत वन गये थे। यह कैसा काफिर था जिसने खुदा के घर को हिला दिया ! यह तो कोई पहुंचा हुआ वली है। सब हाजी गुरुजी के पांव मे गिर गये, और क्षमा मागने लगे।

दूसरे दिन सारे शहर में गुरुजी की इस बात की धूम पड़ गई। दूर-दूर देश-विदेश से आये हाजी, काजी, वली, फकीर, गुरुजी के पास आने लगे, ताकि इस महान् आत्मा के दर्शन कर सके। इनमें से कुछ हाजी भारत से भी गये हुये थे। उनके हृदय मे गुरुजी को देखकर देश-प्रेम जाग उठा। इन सब लोगो ने मिलकर एक विचार-गोष्ठी का प्रवन्ध किया, जिसका अर्थ केवल गुरुजी की ज्ञान-परीक्षा लेना था। गुरुजी अन्तर्यामी थे। वह सब कुछ जानते हुये हसे, और इनकी बातो की परवाह न करते हुये तैयार हो गये।

गोष्ठी का प्रबन्ध हो गया। बडे-बडे हाजी, काजी, फकीर लोग आ गये।

गुरुजी से पहला प्रश्न किया गया—

"आप हिन्दू है अथवा मुसलमान ?"

"न मैं हिन्दू हूं न मुसलमान। मै तो ईश्वर का पैदा किया हुआ एक प्राणी हू, उसी स्वामी का सच्चा सेवक।" गुरुजी ने उत्तर दिया।

"यदि आप कुछ नही तो बताओ इन दोनो मे से अच्छा कौन है ?"

"मेरे विचार मे दोनो में से कोई भी अच्छा-बुरा नहीं है। दोनों ही इस समय पागल हो चुके है, दोनों अपने वास्तविक धर्म को भूल चुके है। दोनों यह भूल चुके है कि इन्सान को ईश्वर ने बनाया है और इस इन्सान ने ईश्वर को भूलकर धर्म नरवाण आरंभ कर दिया है। धर्म हमें दुश्मनी नही सिखाता प्रेम सिखाता है। हम प्रेम को भूलकर नफरत की ओर चल पडे है, जो हमे खुदा ने नहीं सिखाई। फिर तुम स्वयं सोचो, हम धर्म का पालन कहां तक कर रहे हैं। जहां प्यार है, वहा पर ही खुदा है, जहां नफरत है, वहा पर शैतान है। भाई

गुरुदास की यह वाणी उस समय की सच्ची प्रतीक है—

पुछण, खोलह किताब नू बढ़ा हिन्दू कि मुसलमानोई।
बाबा आखे हाजियां शुभ अमलां बाझो दोवे रोई।
हिन्दू मुसलमान दोये दरगाह अन्दर लैन न ढोई।

इसी भांति सब लोग गुरु जी पर प्रश्न करते रहे। गुरु जी हर प्रश्न का उत्तर बड़ी दिलेरी से देते रहे। उन लोगो ने गुरुजी को हराने के बहुत यत्न किये, मगर गुरुजी कहां हारते। उनके अग-सग तो ईश्वर था।

गुरुजी की इस जीत पर बहुत से हाजी इनके पुजारी बने।

कुछ दिन के पश्चात् वह मक्के से बगदाद की ओर चल पड़े। काजियों और दूसरे मुसलमान ज्ञानियो ने रोकने के बहुत यत्न किये, मगर गुरुजी नही रुके। बहुत जिद्द करने पर गुरुजी ने अपनी पवित्र खड़ाऊं, काजी रुकनद्दीन को दे दीं, इस बारे में भाई गुरुजी ने इस प्रकार लिखा है।

घटी निशानी कौस* मक्के अंदर पूज कराई,

वार० १, ३४

गुरुजी की वह खडाऊ मक्के से काजी जी उच्चशरीफ ले आये। यहां आज तक भी वह पवित्र खड़ाऊं रखी हुई है। यहां हजारो श्रद्धालु भक्त आज तक उनके दर्शन करते हैं। बहुत सारे धनवान सिखो ने उन खड़ाऊं को लाने का यत्न किया मगर वहां के पीर साहिब देने के लिये राजी नही हुये।

यहां से गुरुजी बगदाद और तुर्की की ओर चले गये।

बगदाद मे गुरुजी ने बहुत सारे फकीरो, वलियों और इसलाम-प्रचारको से खुलकर धर्म के बारे में विचार-विमर्श किया। हर

* कौस खड़ाऊं को कहते थे।

स्थान पर इनकी जयजयकार हुई। गुरु जी की बातें लोगों का
स ा मन छू लेती थी। कोई किसी भी धर्म का मानने वाला हो,
किसी भी जाति का हो, गरीब हो या अमीर, गुरु जी अपनी
बातो से उसे प्रभावित कर लेते थे। लोग उनकी बातें सुनते ही
निष्कपट मन से उनके भक्त बन जाते। सब स्थानो पर उन्होने
अपने यादगारी के चिह्न छोडे।

बगदाद शहर मे आज भी उनकी एक यादगारी 'खतबा'
(नीव पत्थर) लगा हुआ है। दूसरे युद्ध में जो भारतीय सैनिक
वहां गये थे, उन्होने इसे देखा है। यह स्थान बगदाद के पश्चिम
मे कोई एक मील की दूरी पर है। यहां एक बहुत लम्बी-चौड़ी
चारदीवारी है जिसके उत्तर मे एक श्मशान भूमि है। इस
चारदीवारी मे उत्तर की ओर दो कमरे है। पश्चिम वाले कमरे
मे, 'बहलोलदान' की कब्र है और दूसरी ओर मुहम्मद पाशा
अरनाऊत की कब्र है। इस दूसरे कमरे की उत्तर पूर्व वाली
दीवार के साथ गुरु जी का यादगारी थड़ा है। इस थड़े के पास
वाली दीवार मे एक यादगारी पत्थर लगा हुआ है, जिसमे
अरब और फारसी भाषा मे लिखा हुआ है। यह अक्षर अब
स्पष्ट तो नहीं पढे जाते मगर वहा के विद्वानो ने बड़ी मेहनत
से इसकी खोज की है। यह बात स्मरण रहे कि गुरुजी
स्वयं फारसी भाषा के अच्छे विद्वान् थे, और यहां यह भी जान
पडता है गुरुजी ने अरबी भाषा का ज्ञान वहां प्राप्त कर
लिया था—

इसका अर्थ इस प्रकार है—

गुरु अर्थात् हज़रत बाबा नामक फकीर औलिया की याद मे
यह इमारत सात पीरो की मदद से नये सिरे से बनवाई गई।
— तारीख यह निकली है। इन नेकबख्त मुरीदो ने दया का
मा पैदा किया है। स० ९२७ हिजरी।

१५२० स० ई०, में गुरु जो बगदाद गए थे, उस मुसलमानी केन्द्र में किसी हिन्दू का गुजरना भी असभव था वहा जाकर धर्म-प्रचार किया और वहां पर आदर-मान प्राप्त किया। यह इसी बात का पक्का सबूत है कि वहां के आपके पुजारियो ने आपकी यादगार बनवाई।

स्थान पर इनकी जयजयकार हुई। गुरु जी की बातें लोगों का न। मन छू लेती थी। कोई किसी भी धर्म का मानने वाला हो, किसी भी जाति का हो, गरीब हो या अमीर, गुरु जी अपनी बातो से उसे प्रभावित कर लेते थे। लोग उनकी बातें सुनते ही निष्कपट मन से उनके भक्त वन जाते। सब स्थानो पर उन्होने अपने यादगारी के चिह्न छोड़े।

बगदाद शहर मे आज भी उनकी एक यादगारी 'खतबा' (नीव पत्थर) लगा हुआ है। दूसरे युद्ध में जो भारतीय सैनिक वहा गये थे, उन्होने इसे देखा है। यह स्थान बगदाद के पश्चिम मे कोई एक मील की दूरी पर है। यहां एक वहुत लम्वी-चौड़ी चारदीवारी है जिसके उत्तर मे एक श्मशान भूमि है। इस चारदीवारी मे उत्तर की ओर दो कमरे है। पश्चिम वाले कमरे मे, 'बहलोलदान' की कब्र है और दूसरी ओर मुहम्मद पाशा अरनाऊत की कब्र है। इस दूसरे कमरे की उत्तर पूर्व वाली दीवार के साथ गुरु जी का यादगारी थड़ा है। इस थड़े के पास वाली दीवार में एक यादगारी पत्थर लगा हुआ है, जिसमे अरब और फारसी भाषा मे लिखा हुआ है। यह अक्षर अब स्पष्ट तो नहीं पढे जाते मगर वहा के विद्वानो ने बडी मेहनत से इसकी खोज की है। यह बात स्मरण रहे कि गुरुजी स्वयं फारसी भाषा के अच्छे विद्वान् थे, और यहा यह भी जान पडता है गुरुजी ने अरबी भाषा का ज्ञान वहां प्राप्त कर लिया था—

इसका अर्थ इस प्रकार है—

गुरु अर्थात् हज़रत बाबा नामक फकीर औलिया की याद में यह इमारत सात पीरों की मदद से नये सिरे से बनवाई गई। इस तारीख यह निकली है। इन नेकबख्त मुरीदो ने दया का चशमा पैदा किया है। स० ९२७ हिजरी।

१५२० स० ई०, में गुरु जो बगदाद गए थे, उस मुसलमानी केन्द्र में किसी हिन्दू का गुजरना भी असंभव था वहां जाकर धर्म-प्रचार किया और वहां पर आदर-मान प्राप्त किया। यह इसी बात का पक्का सबूत है कि वहां के आपके पुजारियो ने आपकी यादगार बनवाई।

वापसी और वली कंधारी से भेंट

बगदाद, तुर्की, ईरान से अफगानिस्तान होते हुये गुरुजी वापस भारत की ओर चल पड़े। पेशावर से अटक को पार करते हुये आपने पजाब मे प्रवेश किया। यहा से वह हसन अबदाल पहुंचे, जो रावलपिंडी से कोई तीस मील दूर है, (यह क्षेत्र अब पाकिस्तान देश का भाग बन चुका है)। यहा आप नगर के बाहर एक पहाड़ी स्थान पर डेरा लगाकर बैठ गये और अपना पूजा-पाठ करने लगे।

उस पहाड़ी के ऊपर एक तपस्वी मुसलमान फकीर बाबा हसन अबदाल वली कधारी रहता था। वही पर एक चश्मा था जिसका ठडा और मीठा पानी एक तालाब के रूप मे इकट्ठा हुआ रहता था। यही से नगर के लोग पीने का पानी लेते थे, यही पर वली कधारी विराजमान था।

गुरुजी के वहा पहुंचते ही गाव के लोग उनका शब्द कीर्तन सुनने के लिये इकट्ठे हो गये। जैसे-जैसे लोगो को पता चलता गया, वैसे-वैसे गुरुजी के पुजारियों की संख्या बढती गई। गुरु जी की सीमा इस क्षेत्र मे बढनी आरभ हुई। यहा तक कि वली

कधारी के चेले भी गुरुजी की प्रशंसा करने लगे।

जब वली कधारी ने सब लोगो को गुरुजी की प्रशंसा करते सुना तो वह ईर्ष्या से जल उठा। वह कैसे सहन कर सकता था। लोग उसके होते हुये किसी दूसरे फकीर की पूजा करे। वह क्रोध मे इस कदर अधा हो गया कि उसने यह प्रतिज्ञा कर ली कि मै इस चश्मे का पानी न गाव वालो को दूगा और न ही उनके इस गुरु को।

गाव वालो ने जब यह बात सुनी तो वह घबरा गये और हाथ जोडकर वली कंधारी के पास पहुचे। "पीर जी, हम पर इतना जुल्म न करो। पीने का पानी हमे अवश्य दो नही तो हम प्यासे मर जायेगे।"

मगर वली कधारी तो क्रोध मे अधा हो चुका था। उसने किसी की भी न सुनी और सबसे कह दिया, "मै एक बूद पानी की नही दूगा, न आपको न आपके इस गुरु को। सब प्यासे मरो।"

जब लोगो ने और अधिक कहा तो उसने कहा—

"यदि तुम्हारा गुरु इतनी शक्ति का मालिक है, तो वह अपनी शक्ति से नया चश्मा ही वहां क्यो नही पैदा कर लेता ?"

वली कधारी की बात सुनकर सब लोग निराश होकर गुरु जी के पास आये। गुरुजी ने जब सब बाते सुनी तो उन्होने मरदाने से कहा, "जाओ, तुम वली कधारी के पास जाकर बडे प्यार से उन्हे समझाओ कि फकीरो को गुस्सा शोभा नही देता। हम लोगो की सेवा के लिये ससार मे आये हैं, हमे लडना नही चाहिये। सेवा हमारा धर्म है।"

मरदाना गुरुजी के कहने पर वली कधारी के पास पहुचा और दोनो हाथ जोडकर उनसे प्रार्थना की कि वली जी मेरे गुरुजी ने आपकी सेवा मे मुझे इस कार्य के लिये भेजा है।

"जाओ, जाकर कह दो, यदि तुम गुरु बनेफिरते हो तो क्यों नही गुरु शक्ति से नया चश्मा पैदा कर लेते ?"

मरदाने ने गुरु जी से सब बाते बता दी।

जी ने कहा, "चिंता न करो। जहां तुम खड़े हो, इस जगह को खोदकर देखो, इसके नीचे पानी का चश्मा है।"

कुछ लोगों ने जल्दी से उस स्थान को खोदा तो नीचे से ठंडे और मीठे पानी का चश्मा फूट पड़ा। सब लोग खुशी से नाचने लगे और गुरुजी की जय जयकार होने लगी।

पंजा लाया

जब वली कधारी ने देखा कि गुरुजी ने तो वास्तव मे ही वहां पर पानी का चश्मा पैदा कर लिया है, लोग वहां से पानी पी रहे है और चारो ओर से गुरुजी की जयजयकार की आवाजे आ रही है, तो बदले की भावना से अंधा हो गया। इसी अधेपन मे उसने पहाड़ी से एक बहुत बड़ा पत्थर गुरुजी की ओर लुढका दिया, ताकि यह सब लोग पत्थर के नीचे आकर दबकर मर जाये। उस समय गुरुजी दातून कर रहे थे। उन्होने जब इतने बड़े पत्थर को तेजी से अपनी ओर आते देखा तो उन्होंने अपना एक हाथ आगे कर दिया।

गुरुजी का पंजा लगते ही पत्थर वही रुक गया। कुछ लोगों का ख्याल है कि अभी तक गुरुजी के पजे का निशान उस पत्थर मे है। उस पजे के नाम पर ही उस स्थान पर गुरुद्वारा पंजा साहिब बना हुआ है।

जब वली कधारी ने यह सब दृश्य अपनी आखों से देखा तो वह गुरुजी के पाव मे गिर पड़ा और उनका चेला बन गया।

बाबर के अत्याचार

कहा सुखेल तबेला घोडे कहा मेरी सहनाई
कहासु तेगबन्द गाढेरिडी कहासु लाल कथाई

गुरुजी वहा से सईदपुर अपने पुराने भक्त लाली के यहां पहुचे। पीछे से बाबर अपने देश से मार खाकर भारतवर्ष पर हमला करता, लूटमार करता, बेगुनाहो को कत्ल करता हुआ आ रहा था। उसने स्यालकोट का सारा क्षेत्र जीत कर लूट लिया था। अब वह वहा से तलवडी सईदपुर की ओर बढ रहा था। पठान सरदार जो इस समय अय्याश ओर भोगी हो चुके थे, बाबर के सामने ठहर न सके। जैसे ही बाबर ने हमला किया, वह सामने हाथ जोडकर खडे हो गये। कुछ अपनी गद्दियो को छोडकर भाग गये।

बाबर एक महान विजेता की भाति लूट-मार करता भागा आ रहा था। उसने जिस शहर पर हमला किया, पहले वहा पर लूट-मार की फिर कत्लेआम शुरू कर दिया। इसके पश्चात् जो लोग बच गये उन्हे कैदी बनाकर साथ ले गया। उनसे बेगार ली जाने लगी। इन सब चाजो के बारे में पहले अध्याय मे

विस्तारपूर्वक बताया जा चुका है। बाबर ने सईदपुर पर हमला किया। वहां भी लूट-मार का बाजार गर्म हुआ। कत्लेआम हो रहा था। गुरु जी उस समय भाई लालो के घर मे थे। मरदाना भी वही था। उन दोनों को और लोगो की भांति कैदी बना लिया गया। भाई मरदाने को एक फौजी घोड़े की लगाम पकड़ा दी गई। गुरु जी के सिर पर एक भारी गठरी रख दी गई।

गुरु जी के सिर पर जो बोझ था, वह उसे महसूस नही करते थे, क्योकि उनके हृदय पर तो इससे कही अधिक बोझ पड़ा हुआ था। दर्द-भरी आंखो से वह अपने देशवासियो की हालत देख रहे थे। शरीफ घरो की वह स्त्रिया जिन्होने आज तक घर से बाहर पांव नही निकाला था, कैदी बनी हुई सिर पर मनो बोझ उठाये काफले के साथ चल रही थी। यह सारा दृश्य देखकर गुरु जी का हृदय भर आया। उनकी आंखो से आंसू फूट पड़े। वह पीड़ा भरे स्वर में मरदाने से बोले—

"रबाब बजाओ मरदाने, वाणी आई है।"

मरदाने ने घोड़े को छोड़ दिया और रबाब बजाने लगा। गुरु जी अपने सुन्दर मुख से वाणी का उच्चारण करने लगे। गुरु जी की आवाज मे पहले तो रस था, परन्तु अब तो रस के साथ दर्द भी था। ऐसा दर्द, जिसमें संसार भर की पीड़ा समा गई थी। वह गा रहे थे—

जिन सिरी सोहनि परिया मांगी पाये संदूरि
से सिर काती मुनानि, गलविधि आवै धूड़ि
महिलां अंदरि हीदीयां हुगि बहणि न मिलनी हदूरि।
अदिसु बाब, अदिसु······

लोगो ने जब गुरु जी से गुरुवाणी सुनी तो उनके दुःख अपने आप मिट गये। वह गुरु जी के साथ गाते चलने लगे। शाम को सबको एक कैदियो के कैम्प में रखा गया। यहां इनको चक्कियां

चलाने के लिये दी गई ताकि वावर की सेना के लिये आटा पीसें।

जब शाम को बाबर कैम्प में कैदियों को देखने आया तो उसने देखा जो चक्की गुरु जी को पीसने के लिये दी गई है, वह तो अपने आप चल रही है। गुरु जी पास बैठे भजन गा रहे है। मरदाना रबाव वजा रहे है।

वावर समझ गया यह तो कोई बहुत पहुंचा हुआ फकीर है। इसे कैदी वनाकर मैंने बहुत बड़ी भूल की है। ऐसा न हो यह कही मुझे श्राप दे दे। वह हाथ जोडकर गुरु जी के सामने खड़े हो गये और कहने लगे—

"हे साधू महाराजा, हमे क्षमा करो। हमसे भूल हो गई। आप वहुत करनी वाले फकीर है, आप जो मागोगे हम देगे।"

गुरु जी ने हँसते हुए कहा—

वावर जी महाराज! हमे कुछ नही चाहिये। हम तो फकीर है। यदि तुम वास्तव मे ही कुछ देना चाहते हो तो, इन सब वेगुनाहो को छोड़ दो। इनका जो माल लूटा है वह वापस कर दो। यही हमारी इच्छा है।"

वावर ने उसी समय तमाम कैदियों को छोड़ने का आदेश दिया और उन सवका लूटा हुआ माल वापस करवा दिया और वह गुरु जी का पुजारी वन गया।

गुरु जी ने उसे समझाया, "यदि आप इन लोगो पर शासन करना चाहते हो तो लूटो नही। इनके धर्म को न बिगाडो। नफरत को प्रेम से जीतो। इस तरह तुम एक सफल शासक वन जाओगी।"

वावर ने गुरु जी की वातो पर पूरा-पूरा अमल करने का वचन दिया और गुरु जी से आशीर्वाद प्राप्त किया।

यहा से गुरु जी फिर अपने घर की ओर चले गये। यहा से वह फिर वटाले भी गये, फिर मुल्तान की ओर जाने की योजना

वनाई । यह गुरु जी की अन्तिम यात्रा ही कहलाती है। इसके वाद वह फिर कभी यात्रा पर नही निकल सके। शरीर थककर एकदम जर्जर हो चुका था। देश और देशवासियो की विगडी हालत के कारण दुख से उनका मन भी छलनी हो चुका था। अवस्था भी वहुत हो गई थी, किन्तु उन्होने साहस नही छोडा। अन्तिम क्षण तक वह अपना काम करते रहे। गुरु जी तो धर्म-प्रचार के लिये भेजे ही गये थे। वह वैठ कैसे सकते थे। वह फिर अपने कार्य मे लग गये।

करतारपुर में वापसी और मरदाने से जुदाई

अब गुरु जी करतारपुर वापस आकर वहा रहकर धर्म-प्रचार करने लगे। यहा वहुत दूर-दूर से लोग उनके दीवानो मे भाग लेने के लिये आते और धर्म का ज्ञान प्राप्त करके जाते।

यहीपर उनका हर समय का साथी मरदाना ईश्वर को प्यारा हो गया। वह मरदाना जिसने हर दुख-सुख मे उनका साथ दिया, जो उनकी कविताओ मे मन मोहने वाली रवाब की स्वरो से जान डाल देता था। जब मरदाना अंतिम सांसे ले रहा था तो गुरु जी ने पूछा—

"मरदाने अब तुम हमे छोड़कर ईश्वर के पास जा रहे हो। बताओ तुम्हारे मृतक शरीर को जलाया जाये या धरती मे दबाया जाये ?"

मरदाने ने हसते हुये उत्तर दिया, "हे मेरे परम गुरु जी, आप अन्तर्यामी है। अब आप ही बताओ जब मेरी आत्मा इस शरीर से निकल जायेगी तो यह क्या रह जायेगा ? खाली मिट्टी का ढेर। फिर इसकी जो इच्छा हो करो" फिर आप मुझे अपना सेवक समझते हो, इस सेवक के साथ जो भी इच्छा हो करना। आप ही मेरे मां-बाप है, मेरे गुरु है, यह सब चीजे आपने सोचनी

हैं मैने नही। मुझे तो खाली आशीर्वाद दो ताकि मेरा कल्याण हो जाये·· ”

गुरु जी ने मरदाने की देह का बडे आदर से अतिम संस्कार किया· उसके पश्चात् मरदाने का लडका गुरु जी का ख्वाबी बन गया।

गुरु जी अव दिन-रात धर्म-प्रचार मे लगे हुये थे।

भाई लहणा जी और गुरु-गद्दी

बाबा लहणा जी फिरोजपुर जिले के एक अमीर किसान के पुत्र थे और वह दुर्गा माता के बहुत बड़े भक्त थे। उस क्षेत्र में लहणा जी को देवी का बहुत बड़ा उपासक माना जाता था। आमतौर पर लहणा जी अपने घर के एक कमरे मे आटे की एक ज्योति बना उसमे देसी घी डालकर जलाया करते जिसे देवी की ज्योति कहा करते। इसके सामने बैठकर घटो वह देवी की पूजा किया करते।

अपने गाव के एक गुरु प्रेमी भाई जोध जी से गुरु जी के बारे में उसने जब इतना कुछ सुना तो वह करतारपुर जाकर गुरु जी की शरण पड़े और उन्ही के शिष्य बन गये। धीरे-धीरे वह गुरु जी का एक बहुत बड़ा सेवक बन गया।

लहणा जी से अंगद जी बन गये

गुरु जी अब यह बात महसूस कर रहे थे कि उनकी अन्तिम यात्रा का समय निकट आता जा रहा है। इस महान कार्य को

आगे बढाने के लिये किसी ऐसे व्यक्ति की जरूरत है जो उनके पश्चात् यह सब काम सभाल सके। अत में उनकी नजर लहणा जी पर पड़ी।

गुरु जी ने पांच पैसे और एक नारियल लहणा जी के आगे रखकर प्रणाम किया और कहा, "अब आप गुरु अंगद हो गये है। अब मैं सारा कार्य आपको सौप रहा हूं।" यह गद्दी अंगदजी को, असाढ बदी तेरह सवत् १५९६, १४ जून सन् १५३६ को मिली।

इस भाति हमारे प्रिय गुरु जी, ७ सितम्बर, १५३६ ई० को इस संसार से सदा के लिए चले गये। पीछे अपनी अमिट यादे छोड़ गये। वह महान् थे। उनकी लीला महान् थी। वह जिस महान् कार्य के लिये आये थे, उसकी पूर्ति कर चले थे। शेष जो रह गया था, उसको पूरा करने के लिये उनके शिष्य थे। गुरु जी का सारा जीवन तप और त्याग की कहानी है। उन्होंने धर्म को बचाने के लिये जो कुर्बानी दी वह उनका ही अपना भाग था। वह जीवन भर घूमते रहे। केवल धर्म-प्रचार के लिये। एक दिन भी वह चैन से नही बैठे। महात्मा-बुद्ध के पश्चात् यदि किसी भारतीय महात्मा ने धर्म-प्रचार के लिये इतनी लम्बी यात्राएँ की तो वह यह अमर गुरु महात्मा गुरु नानक देव जी थे, जो हमारे धर्म-इतिहास में सदा अमर रहेगे। वह मानवता के लिए जिये, मानवता की रक्षा के लिये जीवन भर सघर्ष करते रहे। वह सच्चे ईश्वर-भक्त थे। पाखडी लोगो के विरुद्ध उन्होने बहुत किया, सच्ची ईश्वर-भक्ति का ज्ञान-मार्ग उन्होने पूरी मानवता को दिखाया।

जिसी प्यारे सिउ नेहु तिसु भरि चलिये।
धिरगु जीवन ससारि ताकै पाछे जीवणा॥

मृतक शरीर के बारे में झगड़ा

यह केवल गुरु जी की ही महानता थी कि उनके मृतक शरीर का संस्कार करने अथवा धरती में दफनाने के लिए झगडा खडा हो गया। अभी गुरु जी अपनी अन्तिम सासें ले रहे थे। उनके श्रद्धालु हिन्दू उनकी देह को अग्नि मे रखकर संस्कार करना चाहते थे। मुसलमान श्रद्धालु चाहते थे कि हम इन्हे दफनायेगे।

गुरु जी ने कहा, "भाई लोगों, इस कार्य के लिये झगडा मत करो। तुम दोनो ही मेरे दोनो ओर अपने-अपने फूल रखकर चादर डाल दो। जिसके फूल मुरझा जायेगे वह हार जायेगे। जिसके फूल मुरझायेगे नही उसको इच्छा अनुसार मेरे शव का अन्तिम दाह-संस्कार किया जाये।

गुरु जी के कहने पर यह सब कर दिया गया।

परन्तु जब सुबह उठकर श्रद्धालु भक्त देखने के लिये बड़े उत्सुक हो आये और उन्होने चादर उठाकर देखा तो वहा गुरु जी का शव ही नही था। उनका शव ईश्वर ने स्वय ही अपने पास बुला लिया था ताकि इस महामुनि के शव के लिये लोग आपस मे न झगड़े।

बस अब दोनों ओर के भक्तो ने अपने-अपने फूल उठा लिये। एक धर्म वालो ने यह फूल दफना दिये, दूसरे धर्म वालों ने उनको चिता में रखकर संस्कार कर दिया। यह दोनो समाधियां रावी नदी के तट पर थी, जिन्हे नदी बहा कर ले गई।

गुरु नानक जी की स्मृति मे कुछ ऐतिहासिक गुरुद्वारे

ननकाना साहब में

१. जन्म स्थान—यहां गुरु जी का जन्म हुआ था।

२. वाल लीला—गुरुद्वारा जन्म स्थान के साथ ही।

३. तवू साहव—यहा पर गुरु जी सच्चा सौदा करने के पश्चात् आकर ब्रिराजे थे।

४. पट्टी साहव—यहा पर वैठ गुरु जी पाठशाला मे पढा करते थे।

५. माल जी साहव—यहा पर वैठकर गुरु जी गाय भैसें चराया, करते थे।

६. क्यारा साहव—यह वह स्थान है जहा गुरु जी ने भैसो के खाये हुये खेत को हरा किया था।

सुलतानपुर में

७ गुरुद्वारा, सत घाट—नदी के किनारे वह स्थान जहा पर गुरु जी लोप हो गये थे।

८. गुरुद्वारा हर साहब—यहां पर गुरु जी ने सरकारी मोदीखाने की दुकान खोली थी।

९. गुरुद्वारा कोठरी साहब—यहा पर नवाब ने आपको बन्दी बनाकर रखा था।

१०. गुरुद्वारा गुरु का बाग—यहां पर गुरु जी की बहन] बीबी नानकी रहती थी, उनके साथ गुरु जी रहते थे।

११. गुरुद्वारा बेर साहब—नदी के तट पर वह स्थान जहा गुरु जी रोज स्नान किया करते थे, यहा पर उस समय से एक बेर खड़ी है।

१२. गुरुद्वारा पजा साहब—यह गुरुद्वारा पाकिस्तान मे है यहा पर गुरु जी ने अपने पजे से वली कधारी का पत्थर रोका था।

१३. गुरुद्वारा मजनू टीला—दिल्ली मे।

———